गुरु गोविंदसिंह

श्री विचित्र नाटक

अनुवादक सरदार शमशेर सिंह

(स्व०) सरदार शमशेर सिंह
1929–1990

संस्थापक
राष्ट्रीय सिक्ख संगत
एवं
गुरुगोविन्द सिंह
साहित्य प्रकाशन प्रसारण समिति।
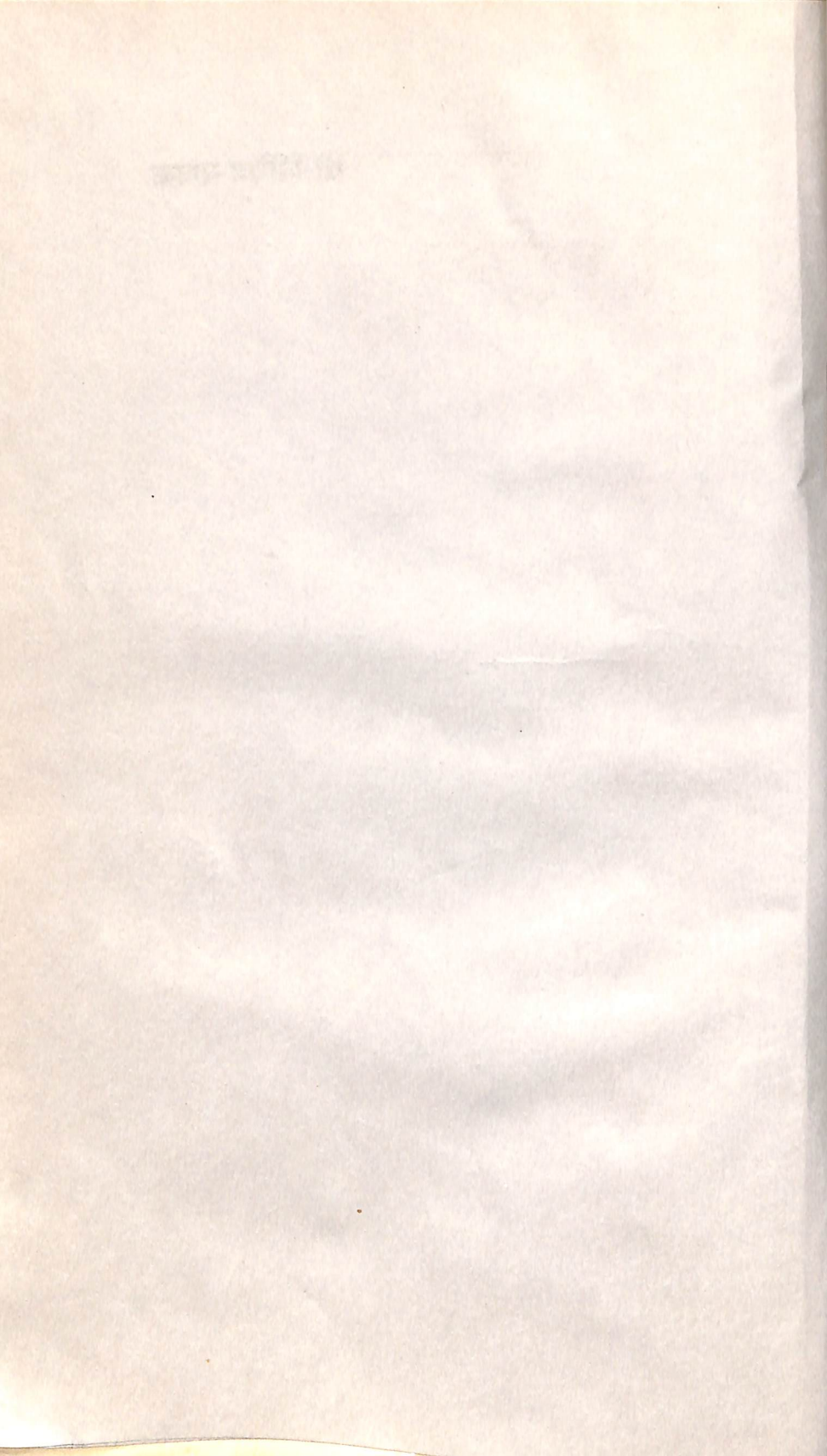
श्री विचित्र नाटक

गुरु गोविन्दसिंह महाराज रचित

श्री विचित्र नाटक

अनुवादक

सरदार शमशेर सिंह

गुरु गोविन्दसिंह साहित्य प्रकाशन प्रसारण समिति

श्री विचित्र नाटक
[काव्य]

गुरु गोविन्दसिंह
प्रथम संस्करण, 1991
मूल्य : सजिल्द 25/-

प्रकाशक
गुरु गोविन्दसिंह साहित्य प्रकाशन प्रसारण समिति
44-सी०, सिंगार नगर,
लखनऊ - 226 005

मुद्रक
विवेक प्रिन्टर्स
रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड,
लखनऊ - 226 020

आवरण शिल्पी : परवेज़ खान

SHRI VICHITRA NATAK : (Poetry) by Guru Govind Singh, published by Shri Guru Govind Singh Sahitya Prakashan Prasaran Samiti, 44-C, Singar Nagar, Lucknow - 226 005, printed by : *VIVEK PRINTERS*, Daliganj Railway Crossing, Sitapur Road, Lucknow - 226 020 (Phone : 73035). Lib.Edn. Rs. 20/-

गुरु गोबिन्दसिंह महाराज

सरदार शमशेर सिंह

1929-1990

संस्थापक : राष्ट्रीय सिख संगत एवं श्री गुरु गोविन्दसिंह

साहित्य प्रकाशन प्रसारण समिति
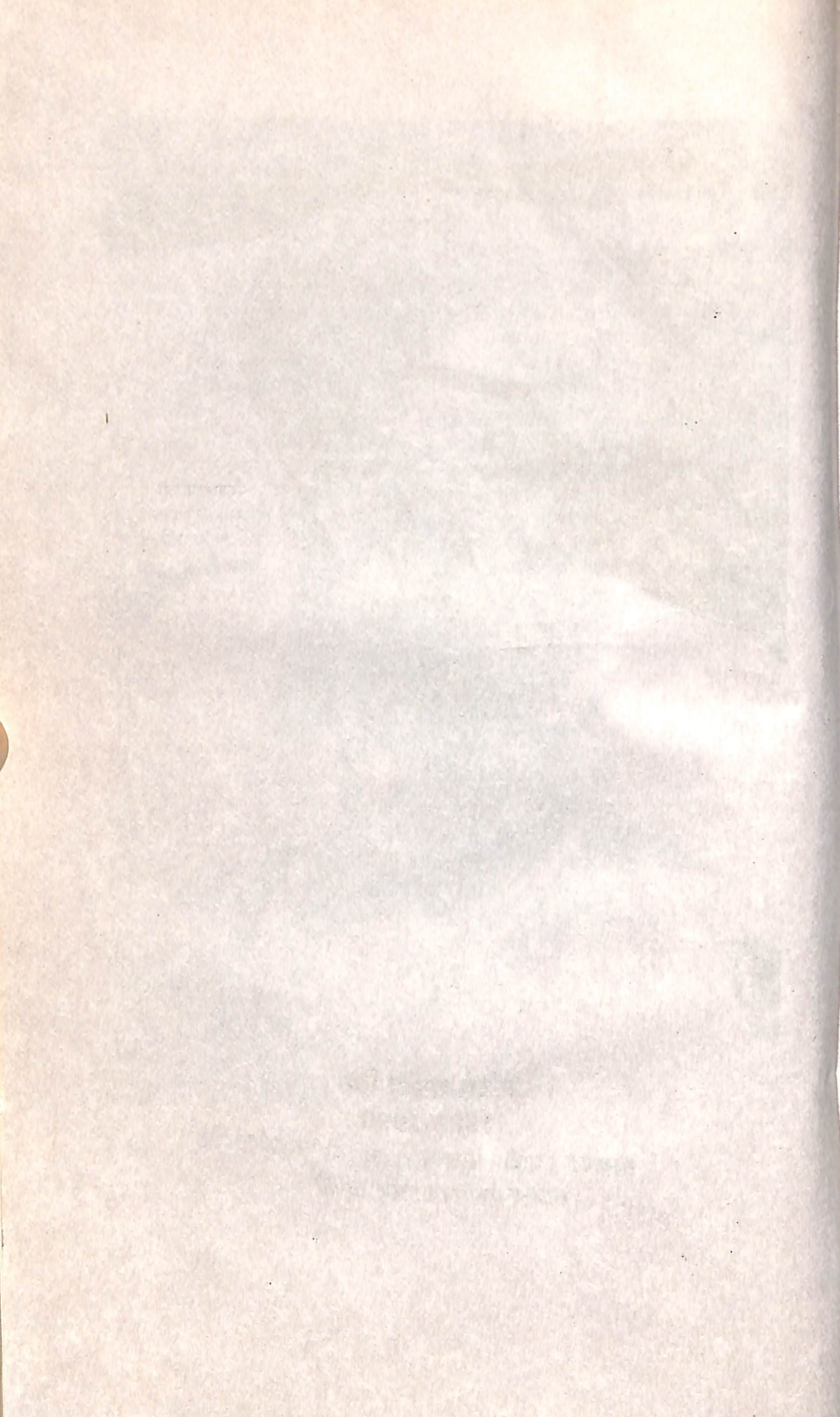
१ ओंकार सतिगुरु प्रसादि

प्रस्तावना

आज जन साधारण गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज के मुख्यतःशस्त्रवेत्ता एंव सेनानी रूप से ही परिचित है। देश उनके महान् बलिदान और उनके खालसा के जन्मदाता के स्वरूप से भी अवगत है किन्तु यह तो उनके महान् व्यक्तित्व का एक स्वलप सा ही परिचय है। उनका जो एक ब्रहमवेत्ता एंव शस्त्रवेत्ता का स्वरूप है, जो एक महान् कवि और भक्त का स्वरूप है उससे तो मानो हम अपरिचित से हैं। यही कारण है कि गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज के सर्वांगीण परिचय के सम्मान में हम उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की महानता को अभी तक सही ढंग से नही आंक सके हैं।

शास्त्रों के अनुसार ब्रहमवेत्ता पुरूष या तो ब्ह्मलीन हो जाते हैं या फिर जीवनमुक्त के रूप में योगग्निमय देह में स्थित रहकर भगवत् ध्यान में तपरत रहते हैं और समय-समय पर भगवत इच्छानुसार इस जगत में धर्म के कार्य के लिये आते रहते हैं। नारद जी, परशुराम जी, शुकदेव जी, व्यास आदि कोटि के जीवनमुक्त ऋषि हैं। मेरी यह मान्यता है कि गुरू गोविन्दसिंह जी महाराज भी जीवनमुक्तों की श्रेणी के ब्रहमेवत्ता हैं। श्वेताश्वेतर उपनिषद के दूसरे अध्याय के बारहवे मंत्र में यह बात इस प्रकार स्पष्ट की गयी है :

"पृथ्वी, जल, तेज, वायु, प्रकाश और इन पांच महाभूतों का सम्यक प्रकार से उल्लंधन होने पर तथा इनसे सम्बन्ध रखने वाले पांच प्रकार के योग सम्बंधी गुणों की सिद्धि हो जाने पर योगग्निमय शरीर को प्राप्त कर लेने वाले उस साधक को न तो रोग होता है, न बुढापा आता है और न उसकी मृत्यु ही होती है।" जैसा कि हम उनके द्वारा रचित "श्री विचित्र नाटक" में देखेंगे। गुरू गोविन्द सिंह जी महाराज योगाग्निमय शरीर को प्राप्त कर लेने वाले एक ब्रहमवेत्ता साधक थे जो युग युगान्तर से परमात्मा उपासना मे तपलीन रहें हैं।

"श्री विचित्र नाटक" में वर्णित गुरूमहाराज जी के कुल, अपने जन्म की कथा तथा अपने आने के उद्देश्य की चर्चा करने से पूर्व यह उचित होगा कि हम उनके द्वारा रचित सम्पूर्ण "दसम गुरू ग्रंथ साहिब जी" का मुख्य विभाजन समझ लें। दसम ग्रंथ का प्रथम मुख्य भाग "जापु" नाम से है जिसमें 271 पदों में ब्रहम के निर्गुण और सगुण लक्षण और महिमा का सविस्तार निरूपण है।उदाहरण के लिये निर्गुण ब्रहम के लक्षण गिनाते हुये गुरू महाराज जी कहते हैं :

> **"नमसतं अकाले। नमसतं क्रिपाले। नमसतं अरूपे। नमसतं अनूपे। नमसतं अभेखे। नमसतं अलेखे। नमलतं अकाए। नमसतं अजाए।"**
>
> *या फिर*
>
> **" अरूप है। अनूप है। अजूप है। अभूप है। अलेख है। अभेख है। अनाम है। अकाम है।"**

यह समस्त जगत, यह जड-चेतनमयी सृष्टि सबकीसब ब्ह्ममयी ही है, वेदांत के इस मूल सिद्धांत का गुरू महाराज जी ने किस सरल किन्तु प्रभावकारी रूप से वर्णन किया है वह निम्न पद से स्पष्ट किया है:

> **"जैसे एक नद ते तरंग कोट उपजत हैं,**
> **पान के तरंग सभै पान ही कहाहिगे।**

तैसे विस्व रूप्य ते अभूत भूत प्रगट होई,

ताहि ते उपज फिर ताही में समाहिगे ।"

दसम ग्रंथ का दूसरा मुख्य भाग " श्री विचित्र नाटक " है जिसमे गुरू महाराज जी ने अपने कुल और अपनी जन्म कथा के बारे में विस्तार से लिखा है ।

श्री विचित्र नाटक के आरम्भ मे 101 पदों, काल की स्तुति की गई है और शेष ग्रंथ में तीन बार देवी चन्डी या भगवती दुर्गा का चरित्र तथा भगवान विष्णु के 24 अवतारों एवं उपअवतारों का पुराणों पर आधारित सविस्तार वर्णन है । भारत के किसी भी भाग में आज तक ऐसा कोई भी संत या कवि नहीं हुआ जिसने जनभाषा में 24 अवतारों और देवी भगवती दुर्गा की लीलाओं का ऐसा विशद एवं काव्यमय वर्णन किया हो । यह श्रेय गुरू गोविन्द सिंह जी को ही जाता है ।

गुरू गोविन्द सिंह जी चन्डी– चरित्र और अवतारों के वर्णन के पूर्व 101 पदों में जो काल की स्तुति की है उसका एक अपना विशेष महत्व है । भगवान के अवतार होते ही दुष्टों के संहार या दलन के लिये हैं । इसलिये यह स्वाभाविक ही है । भगवान का अपने अवतारों में कालरूप प्रधान रहता है । गीता के चौथे अध्याय के इस प्रसिद्ध आठवें श्लोक से हम सब परिचित है :

"परित्राणाय साधूनों विनाशाय च दुष्कृताम

धर्म संस्थापनार्थय सम्भवानि युगे युगे ।।"

"विनाशाय च दुषकृताम" याने दुष्टों का विनाश करना यह धर्म की संस्थापना करने और संतपुरूषों की रक्षा के लिये भगवान के अवतारों का मुख्य उद्देश्य रहता है । सो भगवान को यह कार्य उनके कालरूप में ही सम्भव है ।

गीता के ग्यारहवें अध्याय में तो भगवान कृष्ण ने अपने श्रीमुख से यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी है । भगवान के अति भयानक और उग्र विश्वरूप का दर्शन करके जब भयभीत अर्जुन ने उनको प्रणाम करके उनके स्वरूप को जानना चाहा तो भगवान ने बत्तीसवें श्लोक में उत्तर दिया कि "मैं लोकों का विनाश करने वाला "काल पुरूष" हूं और इस समय प्राणियों का संहार करने के लिये प्रवृत्त हुआ हूं " ।

"कालोऽस्मि लोकक्षपकृत्प्रवृद्धों लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।"

गुरू गोविन्द सिंह जी महाराज 24 अवतारों के वर्णन के आरम्भ में कहते हैं" जब जब होत अरिष्ट अपारा । तब तब देह धरत अवतारा।" अरिहंत देव अवतार में गुरू महाराज जी कहते है:

"जब जब दानव करत पसारा, तब तब विशन करत संहारा।" मत्स्य अवतार में शंखासुर के वध वर्णन करते हुये गुरू महाराज जी अवतार के उद्देश्य को और भी स्पष्ट करते हुये कहते है कि "शंखासुर मारे वेद उधारे शुत्रु संघारे जसु लीनों।"

और काल के अवतार में बडे ही सरस भाव से अवतार के कालरूप का वर्णन इस प्रकार आया है :

"शत्रुन के नासार्थ निमित अवतार अवतारी-----"

जग पाप संमूह विनाशन कउ कलिकी अवतार कहावहगे ।

भल भाग भया है सम्भलके हारे जू हरि मंदर आवहगे----"

भगवान राम और कृष्ण के अवतारों में तो असुरों के विनाश, संतो की रक्षा और धर्म की संस्थापना की पूरी गाथा गुरू महाराज जी ने विस्तार के साथ 110 से अधिक छंदों का प्रयोग करते हुये गाई है और देवी दुर्गा का असुर संहारण और भक्तों पर सहज अनुकम्पा का स्वरूप तो सारे दसम ग्रंथ पर छाया हुआ है । चण्डी की महिमा चण्डी चरित्र तक ही सीमित नहीं है । यह दसम ग्रंथ में इतनी व्यापक है कि गुरू गोविन्द सिंह जी महाराज कृष्णावतार में महाराज लीला को भी बीच–बीच में थामकर गोपियों के मुख से भगवती दुर्गा का स्तवन करवाते रहते हैं ।

हमने इस प्रस्तावना के आरम्भ में गुरूमहाराज जी के ब्रह्मवेत्ता स्वरूप की चर्चा की थी उनका

यह स्वरूप दसम ग्रंथ में किस प्रकार उभरकर ऊपर आता है उसीका दिग्दर्शन हमें श्री विचित्र नाटक में अपरोक्ष रूप से मिलता है । अपने वंश का परिचय देते हुये गुरु गोविन्द सिंह जी ने न केवल अपने सोढी कुल और गुरू नानक देव जी के वेदी कुल को सूर्यवंशी क्षत्रिय ही माना है बल्कि दोनों ही कुलों को सीधे भगवान राम का वंशज माना है । भगवान राम के बडे पुत्र कुश के वंशज कालान्तर में वेदी कहलाए और छोटे पुत्र लव के सोढी । संक्षेप में कथा इस प्रकार है कि काल के प्रभाव से लव और कुश के वंशजों में आपसी युद्ध हुआ । इसमें पहले लव के वंशज कालराय हारकर सनौढ देश में चले गये । वहा के राजा के यहां उनका विवाह हुआ । इस विवाह से जो पुत्र हुआ उसका नाम सोढीराय रखा गया । यहीं से सनौढ या सोढी वंश चला जिसमें आगे चलकर सिक्खों के चौथे गुरू रामदास जी महाराज से लेकर दसवें गुरू गोविन्द सिंह महाराज हुए ।

किन्तु अभी लव कुश के वंशजों का बैर समाप्त नहीं हुआ । उनके अगले घोर युद्ध में कुश के वंश वाले पराजित हुये और भागकर काशी में आकर बस गये । काशी में रहकर कुश के वंशज चारों वेदों के पाठ में लीन हो गये और वेद प्रतिपादित धर्मकार्य का पालन और प्रचलन उनका मुख्य कार्य हो गया । गुरू गोविन्द सिंह जी के शब्दों मे :

"लवी सर्व जीते कुशी सर्व हारे ।
बचे जे बली प्रान लै के सिधारे ।।
चतुर वेद पाठियं कीयो काशी बांस ।
घरे वर्ष कीने तहां ही निवासं ।।
जिनै बेद पठिओं सु बेदी कहाए ।
तिनै धरम के करम नीकै चलाए ।।"

दुसरे शब्दों में कुश के वंशज अपनी हार के बाद अपने काशी वास में चारों वेदों के अध्ययन में लीन होकर तपरत हो गये और बैरभाव से ऊपर उठकर ब्रहमभाव को प्राप्त हो गये या शास्त्रीय शाब्दों में राजऋषि हो गये ।

इस ब्रहमभाव की ऊँची स्थिति में पहुंचकर वेदियों मे पत्र भेजकर सोढियों को भी बैर भाव त्यागने का संदेश भेजा। सौढी राजा ने पत्र पाकर बडे आदर से बेदियों को अपने पास बुलाया और उनसे चारों वेदों का पाठ सुना । सामवेद, यजुर्वेद और ऋग्वेद के पाठ सुनने के बाद जब चौथे अथर्ववेद का पाठ सुना तो सोढियों के सब पाप नष्ट हो गये और उन्हें संसार से वैराग्य हो गया । सोढियों ने तप का संकल्प कर वन जाने का निश्चय कर अपना राज्य बेदियों को सौंप दिया । इस प्रकार सोढी भी समस्त प्रचीन बैरभाव से ऊपर उठकर ब्रह्मज्ञान प्राप्ति के लिये वन मे तप करने चले गये और प्रभु प्रेम में निमग्न हो गये । गुरू महाराज जी के शब्दों में :

"पडे सामवेद जजुरवेद कत्थं । रिंगवेद पढियं करे भाव हत्यं ।
अथरवेद पटिठयं । सुने पाप नठ्ठियं । रहा रीझ राजा ।
दीआ सब साजा । लयो बन्नबांस । महापाप नासं ।"

बेदियों ने प्रसन्नतापूर्वक राज्य ग्रहण किया और राजग्रहण करते समय बेदियो के मुखिया ने सेढिवंश के राजा को अपने ओर से यह वर दिया कि तुमने तीन वेद सुनने के बाद चौथा वेद सुनकर हमें राज्य दिया तो जब हम कलयुग में नानक के नाम से आयेंगे तो चौथा गुरू श्री तुम्हें धारण करायेंगे या

चौथा गुरू तुम्हें धारण करेंगे ।--" जब नानक कलि मैं हम आन कहाई है -
तीन जनम हमहुं जब धरिहै । चौथे जनम गुरू तुहि करिहैं ।"

इस कथा से दो बाते स्पष्ट रूप से सामने आती हैं पहली तो यह कि वेदी न केवल वेदों के ही ज्ञाता हो गये थे वरन् वो त्रिकालदर्शी ब्रहज्ञानी सिद्ध और वर देने में समर्थ हो चुके थे और उन्होंने व्यवहार में उसे सिद्ध भी किया । वो कलियुग में नानक नाम से आए और चौथी गुरू श्री सोढीवंश

में उत्पन्न अपने जमाता गुरू रामदास जी के अधीन कर दी और दूसरी बात यह कि लव–कुश के वंशजों का यह वैरभाव, उनका आगे चलकर वेदी और सौढी नाम प्रसिद्ध होना आदि ऊपर वर्णित सभी घटनाएं त्रेता या द्वापर में ही घटी थी । वेदियों का यह वर कि जब हम कलियुग में नानक नाम से आयेंगे तब चौथा गुरू तुम्हें [याने सोढियों !d] करेंगे, इस बात को सिद्ध करता है कि यह सब बाते कलियुग के पहले की हैं । आगे चलकर श्री विचित्र नाटक में गुरू गोविन्द सिंह जी ने वेदियों के कुल में गुरू नानक देव की जन्म की चर्चा की और बतलाया कि नानक जी ने कलियुग में पुनःधर्म चलाया । इसी परम्परा में नौवें गुरू तेगबहादुर जी हुए जिनके तिलक और जनेऊ की प्रभु ने रक्षा की और जिन्होंने संतो की रक्षा के लिये कलियुग में बडा भारी बलिदान दिया । उन्होंने धर्म संतों के हित में अपना सिर देते समय "सी " भी कष्ट की आवाज नहीं निकाली । "तिलक जुजु राखा प्रभु ताका । कीनों बडो कलि महि साका । साधन हेति इति जिनि करी । सीसु दीआ परू सी न उचरी ।"

तत्पश्चात गुरू गोविन्द सिंह ने अपने जन्म के बारे में जो बतलाया है वह बडे ध्यान से विवेचन करने योग्य है । गुरू महाराज जी ने बतलाया कि मैं तो हिमालय में हिमकुंड पर्वत के सप्तश्रंगस्थान पर भारी तप में लगा था । यह वही स्थान है जहां महाभारत के अनुसार पाण्डवों ने भी योग साधना की थी । और अपने तप का प्रकार बतलाते हुये वे कहते हैं "तह हम अधिक तपस्या साधी * [illegible] ।" और सूफी तपस्या की कि "द्वै ते एक रूप है गयी ।" जब उनकी इस प्रकार की तपोमय अवस्था थीतभी ऐसा घटनाक्रम चला की उन्हें जन्म लेने को विवश होना पडा और यह कि

"तात मात गुरू अलख अराधा,बहु विधि जोग साधना साधा ।
तिन जो करी अलख की सेवा, ताते भए प्रसन्त्रि गुरूदेवा ।
तिन प्रभु जब आइस महि दीया,तब हम जनम कलू महि लीया ।"

उपरोक्त पंक्तियों में गुरू गोविन्द सिंह जी ने कई विशिष्ट बातों की ओर संकेत किया है । एक तो यह कि वो कोई कामन संतान नहीं थे उनके माता पिता यानि गुरू तेगहादुर जी और उनकी धर्मपत्नी दोनों ने ही महान संतान की प्राप्ति के लिये परमात्मा की विशेष रूप से आराधना की और बहुत प्रकार से शास्त्र प्रतिपादित योग और साधनाएं कीं । यहां यह बतलाना उचित होगा कि शास्त्रों में महान संतान की प्राप्ति के लिये बडे–बडे ऋषि मुनियों एवं राजऋषियों द्वारा विशेष तपस्या का वर्णन आया है । शास्त्रों के अनुसार स्वयं भगवान कृष्ण और रूकमणी जी ने महान संतान की प्राप्ति के लिये दस वर्षों तक भगवान शंकर और पावर्ती जी की आराधना की थी । सो इसी महान परम्परा में गुरु तेगबहादुर जी ने भी पत्नी सहित संतान प्राप्ति के लिये तप किया ।

दूसरी बात यह कि उनके तप से प्रसन्न होकर स्वयं प्रभु की प्रेरणा से तपरत गुरू गोविन्द सिंह जी की इच्छा न रहते हुये भी जन्म लेना पडा । और तीसरी बात यह है कि "तब हम जनम कलु मे लीया" इन शब्दों से यह सिद्ध होता है कि कलियुग में उनका यह पहला जन्म था । इसके पूर्व तो युगो युगों से अपनी योगाग्निमय देह में तपरत रहते थे और केवल भगवत कार्य के लिये भगवान और भगवती दुर्गा की लीलाओं के दर्शन आन्नद के लिये बीच–बीच में जन्म लेते रहते थे । इस बात को हम आगे चलकर उन्हीं के शब्दों में स्पष्ट करेंगें ।

अपने जन्म का उद्देश्य बतलाते हुए गुरू महाराज जी बडे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि "हम इह काज जगत मो आए । धरम हेतु गुरूदेव पठाए------धर्म चलावन संत उबारन । दुष्ट सबन को मूल उपारन।"

और यदि कोई यह समझे कि गुरू गोविन्द सिंह जी यह धर्म का कार्य कोई कर्मरत व्यक्ति की तरह करने आए हों तो यह बात नहीं है । वो तो अपने अन्तः जगत में युद्ध करते हुए भी समाधिस्थ ही से रहे और अपने को प्रभु का सेवक मानते हुये उनकी इस जागतिक लीलाओं के केवल दर्शन मात्र बने रहे ।

"मैं हो परम पुरख को दासा । देखनि आपों जगत तमासा ।"

*महाकाल कालका अराधी

उपर यह कहा गया कि गुरू महाराज जी युग–युग में तपरत ही थे । केवल भगवत् इच्छा से उनका कार्य करने या उनके अवतारों की लीलाओं का दर्शनपान करने के लिये जन्म लेते रहें हैं । यह बात दसम ग्रंथ में श्री विचित्र नाटक के अंतिम भाग में स्पष्ट हो जाती है । गुरू गोविन्द सिंह जी अब देवी भगवती और 24 अवतारों के लीलाओं को अपने काव्य में वर्णन करने को ललायित हैं । वो कहते हैं कि "हे प्रभु मैंने पूर्व जन्मों में जिस प्रकार तेरे अवतारों की लीलाएं देखी हैं उन्हें मैं आपकी कृपा से प्रकट करना चाहता हुं ।"

"जिह जिह विधि मैं लखे तमासा ।

चाहत तिनको कियो प्रकासा ।

जो जो जन्म पूरवले हेरे ।

कहिहो सो प्रभु प्राक्रम तेरे ।। "

आगे चलकर पुनः कहते हैं कि "जेजे चरित पूरातन लहे तेते अब चहिअत हैं कहें" ओर "हे परमात्मन आपने अपनी कृपा से मेरे पूर्व जन्मों को स्मरण कर दिया है" "जो जो जन्मु पुरबलों भयों । सो सो सब स्मरण कर दियों"

और चंडी चरित्र की रचना के पूर्व कहते हैं कि जैसे जैसे मुझे पिछले जन्मों की सुधि आती जा रही है वैसे वैसे मै "उन प्रत्यक्ष देखी हुई भगवत् लीलाओं का ग्रंथमय लिखता हूं और सबसे पहले मैने सतयुग में जिस प्रकार देखा, उस प्रकार पहले देवी भगवती चण्डी के चरित्र को नख सिख से विस्तार पूर्वक सुनाता हूं । गुरू महाराज जी के शब्दों में :–

"जिह जिह विधि जनमन सुधि आई । तिम तिम कहे गरंथ बनाई ।

प्रथमे सतिजुग जिह विधि लहा । प्रथमें देवि चरित को कहा ।

पहले चंडी चरित्र बनायों । नख सिख ते क्रम भाख सुनायों ।"

24 अवतारों का वर्णन आंख मूंद करते समय भी गुरू गोविन्द सिंह जी कहते हैं "अब चउबीस उचरों अवतारा । जेहि विध तिन का लखा अखारा ।" याने "जिस प्रकार मैने चौबीस अवतारों की लीलाओं को देखा है उसी प्रकार वर्णन करता हूं ।"

इस प्रकार "श्री विचित्र नाटक" में वर्णित गुरू नानक देव जी अन्य सिक्ख गुरूओं तथा विशेषकर गुरू गोविन्द सिंह जी महाराज के ब्रह्मवेत्ता स्वरूप की झलक हमने इस प्रस्तावना में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत की । मुझे विश्वास है कि पाठक के रसास्वादन के लिये प्रस्तुत करता हूं–

"तारन लोक उधारन भूमहिं दैत संघारन चंड तुही है ।

कारन ईस कला कमला हरि अद्रसुता जह देखो तुही है ।

तामस ता ममता नमता कविता कवि के मन महि गुही है ।

कीनों है कंचन लोह जगत्र मैं पारस मूरत जाहि हुई है।।"

इस प्रस्तावना के अंत में दो शब्द स्वर्गीय शमशेर सिंह जी के बारे में कहना चाहता हूं । अपनी किशोर अवस्था से ही उनका जीवन राष्ट्र और धर्म के लिये समर्पित था । गुरू ग्रंथ साहिब जी, दसम ग्रंथ तथा शास्त्र पुरानों का उन्होंने गहन अध्ययन किया था । सिख इतिहास की गहराई से भी वे भली भांति अवगत थे। पिछले कुछ वर्षो से उनका एकमात्र उद्देश्य हिन्दू एंव सिक्ख समाज की जो साझे की आध्यात्मिक सांस्कृतिक एंव सामाजिक विशारत रही है, उसे समस्त देश में उजागर और प्रचारित करना था । इसी ध्येय को लेकर उन्होंने अपने अनवरत एंव अथक परिश्रम से दो मुख्य संस्थाओं की स्थापना में मुख्य भूमिका निभाई । पहला 'राष्ट्रीय सिख संगत' जिसके वो संस्थापक अध्यक्ष थे और दूसरी 'गुरू गोविन्द साहित्य प्रकाशन एवं प्रसारण समिति' जिसके वो मुख्य सचिव थे और जिसके आज उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री बी० सत्यनारायन रेड्डी मुख्य संरक्षक हैं । इस संस्था के तलाविधान में गुरु गोविन्द सिंह रचित "रामावतार" का हिन्दी लिप्यान्तर

का विमोचन तत्कालीन राष्ट्रपति श्री ज्ञानी जैल सिंह जी ने सन् 1984 में राष्ट्पति भवन से किया था

यह बडे सौभाग्य की बात है कि गुरू गोविन्द सिंह रचित "श्री विचित्र–नाटक" का विमोचन हो रहा है । इसका हिन्दी लिप्यान्तर तथा हिन्दी गद्यानुवाद स्वयं भाई स० शमशेर सिंह जी ने किया था । आज 15 सितम्बर को शमशेर सिंह जी की पहली पुण्य तिथि है । संन 1990 को दिल्ली में शरीर छोडने तक वे राष्ट्र धर्म के ही पुण्य कार्य में संलग्न थे । धर्म एंव राष्ट्र को समर्पित उनका यह पुष्प हमारी उच्चतम धार्मिक एवं राष्ट्रीय भावना को सदा सुवासित करे और हमारी प्रेरणा का श्रोत बना रहे यही हमारी भगवान से मंगल कामना है और यही हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है ।

डा के० पी० अग्रवाल
पी० एच० डी०, डी० लिट०

एक ओंकार सतिगुरु प्रसादि

स्वर्गीय सरदार शमशेर सिंह जी
संस्थापक अध्यक्ष, राष्ट्रीय सिख संगत,

संक्षिप्त परिचय

स्वर्गीय सरदार गुरुबक्श सिंह के इकलौते पुत्र एवं राष्ट्रीय सिख संगत के संस्थापक सरदार शमशेर सिंह जी को क्रूर काल ने दिनांक 17 अक्टूबर, 1990 को हमारे बीच से उठा लिया है। वे 44 सी सिंगार नगर, लखनऊ (उ0प्र0) के निवासी थे। आपका जन्म अविभाजित भारत के बहावलपुर जिले में दिनांक 24 सितम्बर, 1929 में हुआ था। श्रद्धेय शमशेर सिंह जी का बाल्यकाल तथा तरूणावस्था अविभाजित भारत के पंजाब में व्यतीत हुई थी उन्होंने अपनी शिक्षा-दीक्षा लाहौर में प्राप्त की थी। वे अपने बाल्यकाल से ही निडर, देशभक्त तथा राष्ट्रीय विचारों से औत-प्रोत थे, उनका साहचर्य राष्ट्रवादी लोगो के बीच होने से उनमें देश सेवा, समाज सेवा तथा राष्ट्र निर्माण के संस्कार बाल्यकाल से ही कूट-कूट कर भरे थे। उन्होंने संगठन खडा करने की विधा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संध से आत्मसात की थी।

देश की आजादी के लिये एवं तत्पश्चात विभिन्न समस्याओं को लेकर कई बार जेल गये। इमरजेंसी के समय 16 महीने जेल में रहे। विभिन्न भाषाओं एवं धर्म ग्रंथों का आपको बहुत अच्छा ज्ञान था गुरू गोविन्द सिंह जी के साहित्य से आप को बहुत लगाव था अत: इसके गहन अध्ययन के पश्चात इसके प्रचार एवं प्रसार के कार्य में लगे सन 1982 में डा० जे० डी० शुक्ला की (आइ० सी० एस०) अध्यक्षता में गुरू गोविन्द सिंह साहित्य प्रकाशन एवं प्रसारण समिति का गठन किया। सीमित के तत्कालीन उ० प्र० के राज्यपाल श्री सी० पी० एन० सिंह संरक्षक थे। समिति को 108 संत बाबा मोहन सिह जी (कानपुर वालों) का आर्शीवाद भी प्राप्त है आपके द्वारा गुरू गोविन्द सिंह जी की रचना रामावतार का लिप्यान्तर किया गया जिसे ज्ञानपीठ संस्थान ने प्रकाशित किया एवं तत्कालीन राष्ट्पति ज्ञानी जैल सिंह जी ने राष्ट्पति भवन में एक भव्य समारोह कर विमोचित किया।

पंजाब की स्थति से वे अत्यन्त क्षुब्ध थे। इसी चिन्ता से 1986 में उन्होंने राष्ट्रीय सिख संगत का कार्य बडे आत्मविश्वास से प्रारंभ किया। उनकी प्रबल धारणा थी कि गुरूवाणी के प्रचार तथा प्रसार द्वारा अन्य समाज को सम्पूर्ण सिख इतिहास तथा गुरूवाणी का गहन अध्ययन न होने के कारण ही यह समस्या उत्पन्न हुई है तथा गुरूवाणी का प्रसार तथा प्रचार अत्यन्त कठिन कार्य ह। खालसा वेश धारण करना सरल है किन्तु व्रतधारी, अमृतधारी, बनना बडा दुरूह है। साथ ही शेष समाज को भी सिख इतिहास तथा गुरूओं के असीम योगदान की जानकारी एवं कल्पना न होने से वे अपने सिख बन्धूओं को पास से समझ नहीं पायें हैं। इसी बात को समझाने का बीडा श्रद्धेय शमशेर सिंह जी ने उठाया तथा राष्ट्रीय सिख संगत के माध्यम से सम्पूर्ण समाज को गुरू पराम्परा तथा सिखों के देशभक्ति पूर्ण चरित्र को स्पष्ट चित्रण द्वारा समाज के मध्य छाई धुंध को हटाने का प्रयास प्रारंभ किया।

उन्होंने देश तथा विदेश का निरंतर भ्रमण करते हुये राष्ट्रीय सिख संगत की अनेकों शाखाओं को प्रारंभ किया तथा वे यूरोप, कनाडा, रूस, तथा यू० एस० ए० के लगभग 17 राज्यों के प्रवास पर गये। वे मानव संस्कृति परिषद के संस्थापक तथा गुरू गोविन्द सिंह साहित्य प्रकाशन व प्रसारम समिति के महासचिव, उ० प्र० सिख गजेट के महा प्रबन्धक तथा उ० प्र० प्रतिनिधि मंडल

के उपाध्यक्ष रहे । उनके द्वारा रामावतार, चण्डी चरित्र, श्री विचित्र नाटक का अनुवाद किया गया, रामावतार पर उन्हें पुरस्कार भी प्राप्त हुआ । आप लायन्स क्लब से सम्बद्ध रहे तथा विद्युत व्यापारी संघ के अध्यक्ष रहे । आप ब्रिटेन में हुये हिन्दू सम्मेलन में सम्मिलित हुये । अयोध्या में श्री राम मन्दिर के शिलान्यास के अवसर पर आप सम्मिलित थे एवं शिलान्यास किया । आप माननीय लालकृष्ण अडवानी जी की रथ यात्रा में दिल्ली में स्वागतार्थ सम्मिलित हुये । वहीं दुर्भाग्य से आपका आकस्मिक निधन हो गया ।

आपके द्वारा समाज के जागरण हेतु जो सत्कार्य प्रारंभ किये थे वे सतत चलते रहे यह सम्पूर्ण समाज का दायित्व है तथा इसे पूरा करना ही उनके प्रति सच्ची श्रंद्धांजलि होगी ।

गुरुमुखी उच्चारण के लिए विशेष संकेत

प्रस्तुत कृति का लेखन मूलानुगामी है।

लेकिन पाठक यदि गुरुमुखी में, मूलकर्ता की ही तरह, इसके काव्यपाठ का आनन्द लेना चाहें तो मात्राओं के उच्चारण में इस नियम का विशेष ध्यान रखें—

सामान्यतः, प्रथमाक्षर को छोड़कर शब्द में अन्यत्र प्रयुक्त ह्रस्व इ या उ का उच्चारण नहीं होता है। जैसे तजि, सति, मिलि, दयालु, चीतु, किधु का गुरुमुखी में उच्चारण तज, सत, मिल, दयाल, चीत, किध आदि होगा। लेकिन चित, हित, मित, दुर्ग, गुर आदि का उच्चारण यथावत् रहेगा।

'ह' अक्षर के साथ प्रयुक्त 'उ' का उच्चारण सभी अवस्थाओं में होगा।

श्री विचित्र नाटक

श्री विचित्र नाटक

प्रथम अध्याय

ੴ ओंकार वाहिगुरु जी की फतह।।

अथ

बचित्र नाटक ग्रंथ लिख्यते ।।त्वप्रसादि।।
स्त्री मुखवाक पातिशाही ।। 0 ।।

।। दोहरा ।।नमशकार स्त्रीखड़ग को करौ सु हितु चितु लाइ।
पूरन करौ गिरंथ इह तुम मुहि करहु सहाइ ।।1।।

त्रिभंगी छंद ।। स्त्री काल जी की उसतति ।।

खग खंड बिहंडं खल दल खंडं अति रण मंडं बरबंडं।
भुज-दंड अखंडं तेज प्रचंडं जोति अमंडं भान प्रभं।
सुख संता करणं दुरमति दरणं किलबिख हरणं असि सरणं।
जै जै जग कारण स्त्रिशट उबारण मम प्रतिपारण जै तेगं ।।2।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

सदा एक जोत्यं अजूनी सरुपं।
महांदेव देवं महा भूप भूपं।
निरंकार नित्यं निरुपं न्रिबाणं।
कलं कारणेयं नमो खड़ग पाणं ।। 3 ।।

निरंकार न्रिबिकार नित्यं निरालं।
न ब्रिदधं बिसेखं न तरुनं न बालं।
न रंकं न रायं न रुपं न रेखं।
न रंगं न रागं अपारं अभेखं ।। 4 ।।

न रुपं न रेखं न रंगं न रागं।
न नामं न ठामं महा जाति जागं।
न द्वैखं न भेखं निरंकार नित्यं।
महा जोग जोगं सु परमं पवित्यं ।। 5 ।।

अजेयं अभेयं अनामं अठामं।
महा जोग जोगं महा काम कामं।
अलेखं अभेखं अनीलं अनादं।
परेयं पवित्रं सदा न्रिबिखादं ।। 6 ।।

सु आदं अनादं अनीलं अनंतं।
अद्वैखं अभेखं महेसं महंतं।
न रोखं नं सोखं न द्रोहं न मोहं।
न कामं न क्रोधं अजोनी अजोहं ।।7।।

परेयं पवित्रं पुनीतं पुराणं।
अजेयं अभयं भविक्ख्यं भवाणं।
न रोगं न सोगं सु नित्यं नवीनं।
अजायं सहायं सु परमं प्रबीनं। ।। 8 ।।

सु भूतं भविक्खं भवानं भवेयं।
नमो त्रिबिकारं नमो त्रिजुरेयं।
नमो देव देवं नमो राज राजं।
निरालंब नित्यं सु राजाधिराजं ।। 9 ।।

अलेखं अभेखं अभूतं अद्वैखं।
न रागं न रंगं न रुपं न रेखं। ।मू.ग्रं.3 ।
महां देव देवं महा जोग जोगं।
महा काम कामं महा भोग भोगं। ।। 10 ।।

कहूं राजसं तामसं सातकेयं।
कहूं नार को रुप धारे नरेयं।
कहूं देवियं देवतं दईत रुपं।
कहूं रुप आनेक धारे अनूपं। ।। 11 ।।

कहूं फूल ह्वैकै भले राज फूले।
कहूं भवर ह्वैकै भलीभाँति भूलें।
कहूं पवन ह्वैकै बहे बेगि ऐसे।
कहे मो न आवै कथौ ताकि कैसे। ।। 12 ।।

कहूं नाद ह्वैकै भलीभाँति बाजे।
कहूं पारधी ह्वै धरे बान राजे।
कहूं म्रिग ह्वैकै भलीभांति मोहै।
कहूं काम की जिउ धरे रुप सोहै। ।। 13 ।।

नही जानि जाई कछू रुप रेखं।
कहा बास ताको फिरै कउन भेखं।
कहा नाम ताको कहा कै कहावै।
कहा मै बखानो कहे मो न आवै। ।। 14 ।।

न ताको कोई तात मातं न भायं।
न पुत्रं न पौत्रं न दाया न दायं।

न नेहं न गेहं न सैन न साथं।
महाराज राजं महानाथ नाथं। ।। 15 ।।

परम्मं पुरानं पवित्रं परेयं ।
अनादं अनीलं असंभं अजेयं।
अभेदं अछेदं पवित्रं प्रमार्थं।
महा दीन दीनं महा नाथ नाथं। ।। 16 ।।

अदागं अदग्गं अलेखं अभेखं।
अनंतं अनोलं अरुपं अद्वैखं।
महा तेज तेजं महा ज्वाल ज्वालं।
महा मंत्र मंत्रं महा काल कालं। ।। 17 ।।

करं बाम चाप्यं क्रिपाणं करालं।
महा तेज तेजं बिराजै बिसालं।
महा दाड़ दाड़ं सु सोहं अपारं।
जिनै चरबीयं जीव जग्यं हजारं। ।। 18 ।।

डमा डंम डउरु सिता सेत छत्रं।
हाहा हूह हासं झमा झम्म अत्रं।
महा घोर सबदं बजे संख ऐसं।
प्रलै काल के काल को ज्वाल जैसं ।। 19 ।। ।। रसावल छंद।।

घणं घंट बाजं।
धुणं मेघ लाजं।
भयो सद्द एवं।
हड्यो नीरधेवं। ।। 20 ।।

घुरं घुंघरेयं।
धुणं नेवरेयं।
माह नाद नादं।
सुरं निरबिखादं। ।। 21 ।।

सिरं भाल राजं।
लखें रुद्र लाजं।
सुभे चार चित्रं।
परम्मं पवित्रं ।। 22 ।।

महा गरज गरजं।
सुणे दूत लरजं।
स्त्रवं स्त्रोण सोहं।
महा मान मोहं ।। 23 ।। ।भुजंग प्रयात छंद।

स्त्रिजे सेतजं जेरजं उतभूजेवं।
रचे अंडजं खंड ब्रहमंड एवं।
दिसा बिदिसायं जिमी आसमाणं।
चतुर बेद कथयं कुराणं पुराणं। ।24।

रचे रैण दिवसं थपे सूर चंद्रं।
ठटे दईव दानो रचे बोर बिद्रं।
करी लाह कलमं लिख्यो लेख माथं।
सभै जेर कीने बली काल हाथं ।25।

कई मेट डारे उसारे बनाए।
उपारे गड़े फेरि मेटे उपाए।
क्रिआ काल जू की किनू न पछानी।
धन्यो पै बिहैहै धन्यो पै बिहानी। ।26।

किते क्रिशन से कीट कोटै बनाए।
किते राम से मेटि डारे उपाए।
महा दीन केते प्रिथी मांझ हूए।
समै आपनी आपनी अंति मूए। ।27।

जिते अउलीआ अंबीआ होइ बीते।
तित्यो काल जीता न ते काल जीते।
जिते राम से क्रिशन हुइ बिशन आए।
तित्यो काल खापिओ न ते काल धाए। ।28।

जिते इद्र से चंद्र से होत आए।
तित्यो काल खापा ने ते काल घाए।
जिते अउलीआ अंबीआ गउस है हैं।
सभै काल के अंत दाड़ा तलै हैं। ।29।

जिते मानधातादि राज सुहाए।
सभै बांधिकै काल जैलै चलाए।
जिनै नाम ताको उचारो उबारे।
बिना साम ताको लखै कोट मारे। ।30।

।। रसावल छंद ।। ।। त्व प्रसादि ।।

चमंकहि क्रिपाणं।
अभूतं भयाणं।
धुणं नेवराणं।
घुरं घुंघ्रयाणं। ।। 31 ।।

चतुर वाँह चारं।
निजूट सुधारं।
गदा पाँस सोहं।
जमं मान मोहं। ।। 32 ।।

सुभं जीभ ज्वालं।
सु दाढ़ा करालं।
बजी बबं संकं
उठे नाद बंखं। ।। 33 ।।

सुभं रुप स्यामं।
महा सोभ धामं।
छबे चार चित्रं।
परअं पवित्रं ।। 34 ।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

सिरं सेत छत्रं सु सुभ्रं बिराजं।
लखे छैल छाइआ करे तेज लाजं।
बिसालाल नैनं महाराज सोहं।
ढिगं अंसुमालं हसं कोट क्रोहं। ।।35।।

कहूं रुप धारे महाराज सोहं।
कहूं देव कंनिआन के मान मोहं।
कहूं बीर ह्वैकै धरे बान पानं।
कहूं भूप ह्वैकै बजाए निशानं। ।।36।।

।। रसावल छंद ।।

धनुर बान धारे।
छके छैल भारे।
लए खग्ग ऐसे।
महाबीर जैसे। ।।37।।

जुरे जंग जोरं।
करे युद्ध घोरं।
क्रिपानिधि दिआलं।
सदायं क्रिपालं ।।38।। ।मू.ग्र.41।

सदा एक रुपं।
सभै लोक भूपं।
अजेयं अजायं।

सरत्रिय सहाय ॥39॥

तपै खग्ग पानं।
महा लोक दान।
भविक्खयं भवेअं।
नमो निरजुरेअं ॥40॥

मधो मान मुंडं।
सुभं रुड झुंडं।
सिरं सेत छत्रं।
लसं हाथ अत्रं ॥41॥

सुणे नाद भारी।
त्रसे छत्र धारी।
दिशा बसत्र राज।
सुणे दोख भाजं ॥42॥

सुणे गद्द सद्दं।
अनंतं बिहद्दं।
घटा जाणु स्यामं।
दुतं अभिरामं ॥43॥

चतुर बाह चारं।
करो।टं सु धारं।
गदा संख चक्रं
दिपै क्रूर बक्रं ॥44॥ ॥ नराज छंद ॥

अनूप रुप राजियं।
निहार काम लाजियं।
अलोक लोक सोभयं।
बिलोक लोक लोभियं ॥45॥
चमक्कि चंद्र सीसियं।
रहियो लजाइ ईसियं।
सु सोभ नाग भूखणं।
अनेक दुशट दूखणं ॥46॥
क्रिपाण पाण धारियं।
करोर पाप टारियं।
गदा ग्रिसट पाणियं।
कमाण बाण ताणियं ॥47॥
सबद्द संख बज्जियं।

घणंकि घुमंर गज्जियं।
शरनि नाथ तोरियं।
उबार लाज मोरियं ।।48।।

अनेक रुप सोहियं।
बिसेख देव मोहियं।
अदेव देव देवलं।
क्रिपा निधान केव्लं ।।49।।

सु आदि अंति एकयं।
धरे सरुप अनेंकियं।
क्रिपाण पाण राजई।
बिलोक पाप भाजई ।।50।।

अलंक्रितं सु देहियं।
तनो मनो कि मोहियं।
कमाण बाण धारही।
अनेक शत्र टारही ।।51।।

घमक्कि घुंघरं सुरं।
नवंन नाद नूपरं।
प्रज्वाल बिज्जुलं जुलं।
पवित्र परम निरमलं ।।52।। ।।तोटक छंद।।

।। त्व प्रसादि ।।

नव नेवर नाद सुरं न्रिमलं।
मुख बिज्जुल ज्वाल घणं प्रजुलं।
मदरा कर मत्त महा भभकं।
बन मै मनो बाघ बचा बबकं ।।53।।

भव भूत भविक्ख भवान भुवं।
कल कारण उबारण एक तुवं।
सभ ठौर निरंतर नित्त नयं।
म्रिद मंगल रुप तुयं सं भयं ।।54।।

दिड़हाड़ कराल द्वै सेत उधं।
जिह भाजत दुशट बिलोक जुधं।
मद मत्त क्रिपाण कराल धरं।
जय संद्द सुरा सुरयं उचरं ।।55।।

नव किंकण नेवर नाद हुअं।

चल चाल सभा चल क्रम भअं। ।मू.ग्र.42।
घण धुंधर घंटण घोर सुरं।
चा चार चरा चरयं हुहरं ।।56।।

चल चौदहू चंक्रन चंक्र फिरं।
बढवं घटवं हरोअं सुभरं।
जग जीव जिते जलयं थलयं।
अस को जु तवाइसुअं मलयं ।।57।।

घट भादव मास की जाण सुभं।
तन सावरे रावरीअं हंलसं।
रद पंकत दामनीअं दमकं
घन घुंघर घंट सुरं घमकं ।।58।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

घटा सावणं जान स्यामं सुहायं।
मणी नील नगियं लखं सीस न्यायं।
महा सुंद्र स्यामं महा अभिरामं।
महा रुप रुपं महा काम कामं ।।59।।

फिरै चंक्र चउदहू पुरीयं मधिआणं।
इसो कौन बीयं फिरै आइसाणं।
कहो कुंट कौने बिखै भाज बाचै।
सभं सीस के संग स्त्री काल नाचै ।।60।।

करे कोट कोऊ धरे कोट ओटं।
बचैगो न किउ हूं कर काल चोटं।
लिखं जंत्र केते पड़ं मंत्र कोटं।
बिना शरन ता की नही और ओटं ।।61।।

लिखं जंत्र थाके पड़ं मंत्र हारे।
करे काल ते अंत लै कै बिदारे।
कितिओ तेत्र साधै जु जनमं बितायो।
भए फोकटं काज एकै न आयो । ।62।।

किते नास मूंदै भए ब्रह्मचारी।
किते कंठ कंठी जटा सीस धारी।
किते चीर कानं जुगीसं कहायं।
सभे फोकत धरम कामं न आयं। ।।63।।

मधु कोटभं राछसे से बलीअं।

समे आपनी काल तेऊ दलीअं।
भए सुभं नैसुंभ स्त्रोणंत बीजं।
तेऊ काल कीने पुरेजे पुरेजं ।।64।।

बली प्रिथीअं मानधाता महीपं।
जिनै रत्थ चक्रं कोए सात दीपं।
भुजं भीम भरथं जंग जोत डंड्यं।
तिनै अंत के अंत कौ काल खंड्यं ।।65।।

जिनै दीप दीपं दुहाई फिराई।
भुजादंड दै छोणि छत्रं छिनाई।
करे जग्ग कोटं जसं अनेक लीते।
वहै बीर बंके बली काल जीते ।।66।।

कई कोट लीने जिनै दुरग ढाहे।
किते सूरबीरान के सैन गाहे।
कई जंग कीने सु साके पवारे।
वहै दीन देखे गिने काल मारे। ।।67।।

जिनै पातिशाही करी कोट जुग्गियं।
रसं आनरसं भली भाँति भुग्गियं।
वहै अंत को पाव नागे पधारे।
गिरे दीन देखे हठी काल मारे ।68।।

जिनै खंडीअं दंड धारं ।मू.ग्र.43। अपारै।
करे चंद्रमा सूर चेरे दुआरं।
जिनै इंद्र से जीत कै छोड़ डारे।
वहै दीन देखे गिरे काल मारे ।।69।। ।।रसावल छंद।।

जिते राम हूए।
सभै अंति मूए।
जिते किशन ह्वैहै।
सभै अंत जैहै ।।70।।

जिते देव होसी।
सभै अंत जासी।
जिते बोध ह्वैहै।
सभै अंति छैहै ।।71।।

जितै देवरायं।
सभै अंत जायं।

जिते दईत एसं।
तितियो काल लेसं ।।72।।

नरसिंघावतारं।
वहे काल मारं।
बडो दडंधारी।
हण्यो काल भारी ।।73।।

दिजं बावनेयं।
हण्यो काल तेयं।
महा मच्छ मुंडं।
फधिओ काल झुंडं ।।74।।

जिते होइ बीते।
तिते काल जीते।
जिते शरन जैहै।
तितिओ राख लैहै ।।75।। ।भुजंग प्रयास छं

बिना शरण ताकी न अउरै उपायं।
कहा देव दईतं कहा रंक रायं।
कहा पातिशाहं कहा उमरायं।
बिना शरन ताकी न कोट उपायं ।।76।।

जिते जीव जंतं सु दुनीअं उपायं।
सभै अंति कालं बलो काल घायं।
बिना शरन ताकी नहीं और ओटं।
लिखे जंत्र केते पड़े मंत्र कोटं ।।77।। ।। नराज छंद ।।

जितेकि राज रंकयं।
हने सु काल बंकयं।
जितेकि लोक पालयं।
निदान काल दालयं ।।78।।

क्रिपाण पाण जे जपै।
अनंत थाट ते थपै।
जितेक काल ध्याइ है।
जगत्ति जोत जाइ है ।।79।।

बचित्र चारु चित्रयं।
परमय्यं पवित्रयं।
अलोक रुप राजियं।

सुणे सु पाप भाजियं ।।80।।

बिसाल लाल लोचनं।
बिअंत पाप मोचनं।
चमक्क चंद्र चारियं।
अघो अनेक तारियं ।।81।। ।।रसावल छद ।।

जिते लोक पालं।
तिते जेर कालं।
जिते सूर चंद्रं।
कहा इंद्र बिंद्रं ।।82।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

फिरै चौदहू लोकयं काल चक्रं
सभै नाथ नाथे भ्रमं भउह बक्रं
कहा राम क्रिशनं कहा चंद सूरं।
सभै हाथ बाधे खरे काल हजूरं ।।83।। ।। सवैया ।।

काल ही पाइ भयो भगवान
सु जागत या जग जाकी कला है।
काल ही पाइ भयो ब्रहमा शिव
काल ही पाइ भयो जुगीआ है।
काल ही पाइ सुरासुर गंध्रब जुच्छ
भुजंग दिसा बिदिसा है ।।मू.ग्र. 44।
और सकाल सभै बसि काल के
एक ही काल अकाल सदा है ।।84।। ।।भुजंग प्रयात छंद।।
नमो देव देवं नमो खड्ग धारं।
सदा एक रुपं सदा निरबिकारं।
नमों राजसं सातकं तामसेअं।
नमो निरबिकारं नमो निरजुरेअं ।।85।।

नमो बाण पाणं।
नमो निरभयाणं।
नमो देव देवं।
भवाणं भवेअं ।।86।।

।। रसावल छंद ।।

नमो खग्ग खंडं क्रिपाणं कटारं।
सदा एक रुप सदा निरबिकारं।

नमो बाण पाणं नमो दंड धारयं।
जिनै चौदहूं लोक जोतं बिथारयं ।।87।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

नमशकारयं मोर तीरं तुफंगं।
नमो खग्ग अदग्गं अभेअं अभंगं।
गदायं ग्रिसटं नमो सैहथीअं।
जिनै तुल्लीयं बीर बीयो न थोअं ।।88।।

।। रसावल छंद ।।

नमो चंक्र पाणं।
अभूतं भयाणं।
नमो उग्र दाड़ं।
महा ग्रिसट गाड़ं ।।89।।

नमो तीर तोपं।
जिनै सत्र घोषं।
नमोधोप पंट्टं।
जिनै दुशट दंट्टं ।।90।।

जिते शसत्र नामं।
नमशकार तामं।
जिते असत्र भेयं।
नमशकार तेयं ।।91।।

।। सवैया ।।

मेर करो त्रिण ते मुहि जाहि गरीबनिवाज न दूसर तोसो।
भूल छिमो हमरी प्रभु आपन भूलनहार कहूं कोऊ मोसो।
सेव करी तुमरी तिन के सभी ही ग्रिह देखीअत द्रब्ब भरोसो।
या कल मै सभी काल क्रिपान के भारी भुजान को भारी भरोसो ।।92।।

सुंभ निसुंभ से कोट निसाचर जाहि छिनेक बिखै हन डारे।
धूमरलोचन चंड अउ मुंड से माहख से पल बीच निवारे।
चामर से रण चिच्छुर से रकतिच्छण से झट दै झझकारे।
ऐसो सु साहिबु पाइ कहा परवाह रही इह दास तिहारे ।।93।।

मुंडहु से मधुकीटम से मुर से अघ से जिनि कोटि दले है।
औट करी कबहूं न जिनै रण चोट परी पग द्वै न टले है।
सिंध बिखै जे न बूडै निसाचर पावक बाण बहे न जले है।
ते अस तोर बिलोक अलोक सु लाज को छाडिकै भाजि चले है ।।94।।

रावण से महरावण से घटकानहु से पल बीच पछारे।

बारदनाद अकंम्रन से जग जंग जुरे जिन सिउ जम हारे।
कुंभ अकुंभ से जीत सभक जग सातहू सिंध *।मू. ग्र. 45। हथिआर पखारे।*
जे जे हुते अकटे बिकटे सु कटे करि काल क्रिपान के मारे। ।।95।।

जो कहू काल ते भाज के बाचिअत तो किह कुंट कहो भजि जइयै।
आगे हू काल धरे अस गाजत छाजत है जिह ते नसि अइयै।
ऐसो न कै गयो कोई सु दाव रे जाहि उपाव सो घाव बचइयै।
जाते न छूटिऐ मूड़ कहू हसि ताकी न किउ शरणागति जइयै ।।96।।

क्रिशन अउबिशन जपे तुहि कोटिक राम रहीम भली विधि ध्यायो।
ब्रहम जप्यो अरु संभ थप्यो तिह ते तुहि को किनहू न बचायो।
कोट करी तपसा दिन कोटिक काहू न कौडी को काम कढायो।
काम का मंत्र कसीरे के काम न काल को घाउ किनहू न बचायो ।।97।।

कोहे को कूर करे तपसा इन की कोऊ कौडी के काम न ऐहै।
तोहि बचाइ सकै कहु कैसे कै आपन घाव बचाइ न ऐहै।
कोप कराल की पावक कुंड मै आप टंग्यो तिम तोहि टंगैहै।
चेत रे चेत अजौ जीअ मै जड़ काल क्रिपा बिनु काम न ऐहै ।।98।।

ताहि पछानत है न महा पसु जाको प्रतापु तिहं पुर माही।
पूजत है परमेश्वर कै जिहके परसै परलोक पराही।
पा पकरो परमारथ कै जिह पा पन ते अति पाप लजाही।
पाइ करो परमेश्वर के जड़ पाहन मै परमेश्वर नाही ।।99।।
मोन भजे नही मान तजे नही भेख सजे नहीं मूंड मुडाए।
कंठ न कंठी कठोर धरै नही सीस जटान के जूटु सुहाए।
साचु कहौ सुनि लै चिति दै बिनु दीन दिआल की साम सिधाए।
प्रात करे प्रभु पायत है किरपाल न भीजत लाँड कटाए ।।100।।

कागद दीप सभै करि कै अरु सात समुंद्रन की मसु कै हो।
काट बनासपती सगरी लिखबे हू के लेखन काज बनै हो।
सारसुती बकता करि कै जुगि कोटि गनेशि कै हाथ लिखै हो।
काल क्रिपान बिना बिनती न तऊ तुम को प्रभु नैक रिझै हो ।।101।।
।मू. ग्रं. 46।

।। इति स्त्री बचित्र नाटक ग्रंथे स्त्री काल जी की उसतति प्रिथम धिआइ संपूरनम सतु सुभम सतु ।। अफजू

एक ओम अर्थात एक ईश्वर ही है उसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं

श्री विचित्र नाटक

। गुरु गोविन्द सिंह जी की आत्म कथा ।

प्रथम अध्याय

1– हे ईश्वर तेरी कृपा तेरा प्रसाद है। श्री मुख वाक्य पादशाही दसवीं मैं इस दुर्गा और भगवती रुपी शक्ति के चिन्ह खड़्ग को बड़े ही सम्मान, प्रेम और श्रद्धा से नमस्कार करता हूं तथा उस शक्ति से प्रार्थना करता हूं कि वह मेरी सहायक हो जिससे मैं इस ग्रंथ को उसकी शक्ति से सम्पूर्ण करने में समर्थ हो सकूं।

2– हे भगवती शक्ति वर दे कि घोर युद्ध में तू मेरे साथ होगी। तेरी ही कृपा ईर्ष्या युक्त और मक्कारों के झुण्डों का नाश करेगी। तू मेरे हाथों और भुजाओं में सदा ही सूर्य की तेज प्रचण्ड शक्ति की भाँति ज्वलंत रहेगी।

3– तू ही तो संतों की रक्षा और दुष्टों का हनन कर, दुखों को हरने वाली शक्ति है। मुझे सदा अपनी सरन में रखना। हे शक्ति वाहिनी मैं तेरा गुणगान और तेरी जय–जयकार जो परलोक में है इस लोक में भी कर रहा हूं। मेरा पालन भी तेरे द्वारा ही होता है।

4– हे शक्ति के स्त्रोत निराकार रुप को न धारण किये सदा सर्वदा पवित्र मुक्ति दायक जो स्वयं कभी गर्भ में आती नहीं जो सब देवों का महादेव है वह ज्योति जो सदा प्रज्ज्वलित है मेरा नमन स्वीकार कर। हे निर्विकार प्रभु तुम पूर्ण स्वरुप हो तुम पूर्ण तरुणाई, बालपन तथा आश्रित, निराश्रित रुप, रेखा, रंग, गंध और रोग सब से परे हो। कितना बड़ा आश्चर्य है यह।

5– कौन सा रुप तुम्हारा नहीं फिर भी उसका कोई रंग नहीं रेखा नहीं। तुम्हारी ज्योति सब जगह प्रज्ज्वलित है फिर भी कौन कह सकता है तुम उक्त स्थान के वासी हो और वह नाम विशेष तुम्हारा है।

6– तुम्हारा किसी से विरोध नहीं, द्वेष नहीं तुम महा योगी हो। काल से परे प्रभु तुम परम पवित्र हो। सारे ब्रह्मांड के स्वामी तुम अजेय हो। तुम्हारे द्वारा किसी को क्या भय हो सकता है। जहां काम को जन्म देने वाले हो वहीं योगी ही नहीं महा योगी हो। तुम्हारे गुण वर्णन से बाहर हैं तुम्हीं सर्व गुण सम्पन्न हो। सब भेष धारण करते हुए भी कोई विशेष भेष वाले तुम नहीं। तू सब कुछ है और सब कुछ से अनासक्त है।

7– तुम ही प्रारम्भ के प्रारम्भ हो तुम अनन्त हो, अनिल हो, अनादि हो। अदृश्य और स्वांग से मुक्त महा ईश्वर हो। सुख, दुखः, हर्ष और मोह, काम, क्रोध से तुम्हारा स्पर्श नहीं। तुम गर्भ से परे अस्पर्शी हो।

- प्रभु तुम पुरातनतम हो। परम और अनादि हो, अजेय हो, अमिट हो तुम सदा ही विजयी हो। तुम रोग और योग से परे सदा नवीन ज्ञान के स्त्रोत जन्म–मरण के स्वामी हो।

- तुम ही तो भूत हो, वर्तमान हो, भविष्य हो। काल तुम्हारा ही नाम है। मेरा बार–बार प्रणाम है उस को जो कष्ट से मुक्त अनासक्त निर्लभं और नित्य ही राजाधिराज है।

)– प्रभु तुम अलेख हो अभेष हो, भूत हो और भविष्य हो, तुम राग से, द्वेष से अलग हो। तुम योगियों के योगिराज हो। तुम सबको रुप देने वाले कामदेव भी हो।

1– भगवन कभी महाराजा होकर सब भोगों को भोगने की लीला करते हो। कभी तुम नारी के सुन्दर रुप को धारण करते हो। तुम देवों और दैत्यों के रुप में प्रकट होते हो। हे अरुप तुम क्या–क्या रुप धारण करने की लीला करते हो।

2– कभी पुष्प बन कर महकते हो कभी भंवर बन कर उसी में खो जाते हो। कभी तूफान बन कर ऐसे चलते हो कि क्या कहें बस मौन ही है इसका उत्तर इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता।

3– कभी तुम ही नाद बनकर मस्ती से बजते हो कभी प्राथ बनकर तीर चलाते फिरते हो, कभी स्वयं ही मृग बनकर प्राथ को मोह लेते हो। कभी काम की मूर्ति बनकर नारद का भी अभिमान चूर्ण करते हो।

14– मेरी बुद्धि से परे हो तुम। तेरे रुप मैं तो क्या कोई भी वर्णन क्रर नहीं सकता। तुम किस भेष में कब और कहां विचरण कर रहे हो, कौन सा नाम तुमने किस समय में कहलवाया है मैं तुम्हारे इस आश्चर्य का बखान करने में असमर्थ हूं।

15– तुम्हारा कोई माता नहीं पिता नहीं, भाई नहीं, पुत्र नहीं, पौत्र नहीं, पालन करने वाली आया अथवा दाया नहीं। तुम्हारा किसी से प्रेम नहीं, कुछ स्नेह नहीं न लगाव। प्रभु तुम राजाओं के राजा और सब के नाथ हो।

16– भगवन तुम अनादि हो, अनिल हो, असम हो, अजेय हो, अभेद हो परम पवित्र धर्म को जन्म देने वाले स्वामी मेरा बारम्बार प्रणाम है तुम्हें।

17– तुम्हारा कोई अन्त नहीं प्रभु तुम अलेख हो। वेदों से परें हो, अभेख हो, अवतारों से उंन्चें हो, शब्द हो, कभी रुप हो और विवेक हो। यश–अपयश से दूर हो तुम्हीं काल के काल हो तथा महा मंत्र हो। तुम्हारी ज्योति के तेज से अधिक तेजवान और कोई हो नहीं सकता।

18– तुम अपने अनेकानेक हाथों में धनुष, खड़ग एवं अनेक शस्त्र धारण किये शिव का तीसरा नेत्र खोले खड़े हो। अपने इस महान तेज के साथ आप स्वयं ही तेजस्वीविराट स्वरुप बन गये हो। तुम्हारा तेजस्वी विराट स्वरुप कितना सुन्दर है। तुम्हारी दाढ़ा में सब चबाये जा रहे हैं। सबका अंत भी यही है।

19– तुम्हारे डमरु से अनेक प्रकार की भयानक ध्वनि के नाद होने लगे हैं मानों मह प्रलय आज समय को भी अंत कर देगी।

20– अनेक घड़ियाल और घंटियों का स्वर ऐसे बज रहा है कि महा मेघ के स्वर को ध्वनि भी सहम सी गई है। लगता है ध्वनियों की बाढ़ आ गई।

21– फिर भी मुझे तो उसमें घुंघरुओं की ध्वनि सुनाई देती है। तुम्हारा ही मधुर नाद सुनाई दे रहा है। इसका स्वर मन मोहक और शांति दायक है।

22– हे महा काली कितनी शोभायमान हो रही है यह नर मुण्डों की माला तेरे गले में। तेरे इस रुप से शिव भी चकित हैं। तेरा यह रुप अत्यंत पवित्र और मन मोहक है।

23– तेरी महान गर्जना को सुनकर दैत्यों और देवों के ह्रदय भी कौंध गये हैं। मुण्डमाल से बह रही रक्त की धारा तेरे प्रचण्ड रुप को और सुन्दर बना रही है और सब को मोहित करने वाला भी तुझ पर मोहित हो गया है।

24– भगवन तुमने हो (पसीना) सेतज, जेयरज, उतभुज (पृथ्वी के गर्भ से जन्म लेने वाली) तथा अन्डों को फोड़ कर जन्म लेने वाली चारों दिशाओं में सब का सृजन किया है। तुमने ही खण्डों के ब्रह्माण्डों की दिशाओं की दिशा रहित अभावों की, चारों वेदों, पुराणों एवं समैटिक दृष्टिकोण की रचना की है।

25– तुम्हीं ने सूर्यों और चन्द्रमाओं की स्थापना कर दिन–रात का निर्माण किया है। तुम्हीं ने उत्पन्न किये हैं देव भी, दैत्य भी और बुद्धिमान मानव भी परन्तु यह सब तेरी ही इच्छा के अधीन हैं। इन सब का अंत भी तू स्वयं करने वाला है।

26– तुम ही बनाने वाले हो सब के और मिटाने वाले भी तुम स्वयं ही हो कितने तुमने मूल से ही नष्ट किये और फिर उनको जन्म दिया यह भी तुम्हारी लीला ही है इसको तुम्हीं जान सकते हो इसका कोई अंत या पारावार नहीं लगा सकता। तुम बे अंत हो।

27– कई बार तुमने कृष्ण जैसे दासों को जन्म दिया वैसे ही राम के रुप को सैकड़ों बार धारण किया। कई बार ।महादीन। महमद का जन्म हुआ और वह अपने धर्म सहित नष्ट हो गया। सिवाय तेरे सबका आना–जाना है, जन्म और मरण है, तुम्हीं आने–जाने से परे हो।

28– जितने भी औलिया पैगम्बर हुए वे मृत्यु के मुहं में गये वे समय को जीत न सके। कई बार युग युगांत्रों में राम कृष्ण के अवतार हुए जो समय की गति से आये और चले गये।

29– जितने भी इन्द्र हुए, चन्द्र मण्डल और तारा मण्डल हुए वे काल की गति के शिकार हो गये कोई भी तो काल को न जीत सका। जितने भी औलिया पैगम्बर गौंस आगे भी होंगें सब काल की दाढ़ा में चबाये जाने वाले हैं।

30– मान्धाता ने महाबली राजा आदि बड़ी शोभा के स्वामी बने नामवर हुए वे सब

भी आत्म–समर्पण के अभाव में मृत्यु के मुख में चले गये। भगवान आपकी कृपा से रसावल छन्द में आगे भी लिख रहा हूं।

31– हे महा काल तेरे हाथ में चमकती कृपाण अभूतपूर्व शोभायुक्त प्रतीत हो रही है। आकाश में यह कौंधती बिजली मुझे घुंघुरुओं की झंकार सी लग रही है।

32– तेरी ये चारों, शक्ति से भरपूर, भुजायें जीवन रहित पुरुषों में जीवन का संचार कर उनमें साहस उत्पन्न कर रही हैं। तेरे एक हाथ में कृपाण और दूसरे में गदा कितनी शोभायमान प्रतीत हो रही है।इस पर तो यम भी मोहित होकर चकित है।

33– तेरी ज्वाला की भांति लपकती हुई जिव्हा शत्रुओं का अंत करने के लिये उन्हें भस्म कर रही है। भैरवी और शंखों की ध्वनि ऐसे गूंज उठी है मानों सागर की लहरें टकरा रही हों।

34– तेरा यह सयामला श्याम रंग, सुन्दर स्वरुप शोभा दे रहा है, तेरी छवि का प्रभाव चारों ओर फैल रहा है, यह कितना प्रिय और पवित्र है।

35– हे जीवन दायिनी जननी तेरे सिर पर शत–शत सूर्यों का चमकता हुआ छत्र शोभायमान है जिसके आगे कोई भी अन्य तेज हीन है। तेरे लाल–लाल नैन मानो अनेकानेक सूर्यों के उदय होते हुए ऊषा काल का दृश्य है जिसे देखकर शत्रुओं के दिल दहल गये हैं।

36 व 37– कहीं पर तो तुम छत्रपति बने हो, कहीं सुन्दरी बन कर देव कन्या का भी अभिमान चूर्ण किया है। कहीं युद्ध के कहीं युद्ध के मैदान में धनुष बाण धारण किये हुए हो कहीं सेनापति (कृष्ण) के रुप में युद्ध हेतु शंख ध्वनि कर रहे हो। धनुष बाण धारण किये तरुणों के हृदय वश में करने वाले और शत्रुओं को नष्ट करने वाले तुम महावीर हो।

38– घनघोर युद्ध में घोर युद्ध कर रहे हो और फिर भी हे दया निधये तुम्हारी कृपालता से कोई वंचित नहीं।

39 व 40– तेरे सदा से अनन्त रुप होने पर भी एक ही आजन्मा, अजेय, दयालू, कृपालू स्वरुप सब लोकों का नायक है। तेरे दूसरे हाथ में कृपा–पात्र है और सब लोग उस पात्र से दान प्राप्त कर रहे हैं। हे स्वयंभू तुम ही वर्तमान दानियों के दानी तुम ही भविष्य हो। हम सब को जन्म देने वाले एवं तेरे माँ के स्वरुप को भी प्रणाम है मेरा।

41– अंहकार युक्त मधू और शुम्भ के मुण्ड को रौंध कर मर्दन करने वाली शक्ति कितनी महान है, छत्र तेरे सिर पर और कितना तेजवान शस्त्र है तेरे हाथों में।

42– तेरी हुंकार को सुनकर बड़े से बड़े क्षत्रपति भी कांपने लगे हैं। तेरा तेज दसों दिशाओं में फैल रहा है। तेरा नाम सुनने मात्र से ही सब दुखों का नाश होता है।

43– तेरी वाणी की गर्जना ही, हे अनन्त एवं सीमा–युक्त मां, काली घटाओं से बिजली की तरह निकली सपर्स दुष्टों के लिये राम वाण बन कर उन्हें जला कर मुक्त कर देती है।

44- हे चार भुजाओं वाली मां कितना सुन्दर रुप धारण किया है तू ने। तेरे हाथों मे गदा, चक्र है कृपाण, फरसा एवं शंख है।

45 व 46- तेरे इस अनूप रुप को निहार कर तो महादेव भी लज्जामान हो गये हैं। तेरे सुन्दरता और शोभा लोक परलोक में न्यारी है। इसे देख कर मन लुभायमान होता है। सदा तेरा ही ध्यान रहता है। तेरे मस्तिष्क पर चन्द्रमा सुशोभित होता है। हर प्रकार से तेरी छवि को देखकर विष्णु की आंखें भी नीची हो रही हैं। तेरे गले में यह सर्पों की मालाएं अनेक दुष्टों के दोष मिटाती हैं।

48- हे हाथों में शमशीर धारण करने वाली तेरे दर्शन मात्र से करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं। गदा धारण करने वाले महाबली तथा धनुष वाण धारी प्रभु यह सब शस्त्र मन मोहक अनहद स्वर उत्पन्न कर रहे हैं।मैनें तेरी ही सरन ली है तू ही मेरी रक्षक है।

49- अनेक तेरे रुप बड़े ही मन मोहक हैं जिसे देवगण भी देखकर अचम्भे में खड़े हैं। तू सुरों और असुरों का प्राण है। वास्तव में तू ही अनेक स्वरुपों में सब जगह शोभायमान है।

50 व 51- तू ही एक मात्र है, जो अनेक रुप धारण करता है। तू ही शस्त्र धारी कृपाणवान प्रभू है जिसका अवलोकन कर पाप नष्ट होते हैं। तू अपने किसी भी गुण के साथ क्या नाम जोड़ कर अवतरित हो जाता है और तन-मन मोह लेता है। धनुष धारी के रुप में अनेक शत्रुओं का हनन करता है। इसे तू ही जानता है।

52- शस्त्रों की खनकार होने लगती है सारा वातावरण गूंज उठता है दुष्टों पर मानों बिजली टूटती है और संतों के हृदय प्रसन्न हो उठते हैं।इसी प्रकार तोटक में छन्द गुरु महाराज भगवान की स्तुति का वर्णन करते हैं ।

53- शस्त्र से टकराती ध्वनि अनमोल झंकार बन गई है और मां तेरा मुख चपला की तरह प्रज्ज्वलित हो उठा है मानों मस्त हाथी की चिंघाड और जंगल में बाघ की गर्जना ने एक हलचल सी मचा दी है।

54 व 55- हे बारम्बार भूत, वर्तमान और भविष्य बनाने वाले ।कल्प के बाद कल्प। समय को चलाने वाले तथा बनाने वाले एक मात्र तत्वमसी सदा सर्वदा सच्चिदानन्द तुम ही स्वयंभू हो। तेरे विराट रुप को देखकर दुष्ट भाग उठे हैं एवं तेरे हाथ में पड़ी कृपाण से उनका भी उद्धार हो गया। हारते हुए देवगण तेरी कृपा से विजय को प्राप्त हुए और जय-जय कार कर विजय गान कर रहे हैं।

56- जब युद्ध की भैरवी बजी कवच युक्त वीर शस्त्रों को लिये तेरे नेतृत्व में बढ़े तो एक गुंजन सा होने लगा फिर स्वतः ही एक भूकम्प आ गया चरों और अचरों का मन धक-धक करने लगा।

57- सब लोकों में जय-जय कार होने लगा। छोटे-बड़े सभी गुणगान करने लगे। चारों दिशाओं में जल और स्थल के जन्तु, मानव और जीव सब नाद करते हुए तेरा गुणगान कर रहे हैं।

58– जैसे भादों में जल युक्त मेघ सुहावना लगता है, तेरा यह सुन्दर स्यामला श्याम रंग मन को मोह गया है। तुम्हारे शस्त्रों की चमक और झंकार वैसे ही है जैसे बादलों के टकराने से बिजली की चमक और नाद होता है।

59– सावन की सुहावनी काली घटाओं की न्याही तुम शील और सुन्दर हो। तेरे नील कण्ठ में मणियों से युक्त शेषनाग लटक रहे हैं। कितना सुन्दर है ये तेरा सयामला सलोना अपनी ओर आकर्षित करता हुआ रुप।

60– तेरा महा चंक्र चारों दिशाओं में घूम रहा है। उस शक्ति चंक्र का सामना करने की कोई भी शक्ति नहीं रखता और न ही उस महा शक्ति से छिप कर और भाग कर कहीं जा सकता है। हर समय और हर जगह वही काल चंक्र हर जीव के सिर पर घूम रहा है।

61– यदि कोई मूर्ख समझ ले कि वह असंख्य ओट में छिपा है तो क्या वह इस महाकाल की चोट से बच जायेगा। मंत्रों और जंत्रों का जाप भी तो उस चोट से बचा नहीं सकता परन्तु प्रभू तेरे नाम का आश्रय ही सुरक्षा है काल की पीड़ा से बचने के लिये।

62– काल को जीतने के लिये अनेकों सिद्धों ने तंत्र ज्ञान को सिद्ध किया अनेक मंत्र लिखते–लिखते थक गये अनेकों ने जंत्रों के जाप प्रारम्भ किये परन्तु वह भी हार गये और कोई भी काल की दाढ़ा से बच न सका। कई तो जीवन भर चमत्कार करने की पिपासा में समाप्त हो गये और उनका कोई भी चमत्कार काम न आया। सभी सिद्धियां बेकार हो गईं। काल के जाल से बच न सके।

63– कई और तो काल से बचने के लिये बृह्मचारी बन समाधी में लीन हो प्राणायाम भी करने लगे और कई दूसरे जटायें बढ़ा कर सन्यासी बन घरों से भाग गये। कई कनफटे योगि बन अपने को वियोगि कहने लगे परन्तु ये सब स्वार्थ के साधन उन्हें काल से न बचा सके और सब व्यर्थ सिद्ध हुआ।

64– काल ने मघू और केतु जैसे बलि राक्षसों को दल डाला तथा रक्तवीज, शुम्भ और निशुम्भ के काल ने टुकड़े–टुकड़े कर दिये।

65– पृथ्वी विजेता राजा बलि तथा शक्तिशाली मान्धाता जैसे महिप जिनके रथों के घोड़ों ने सातों द्वीपों पर अपने पांव रखकर विजय प्राप्त कर ली थी। भारी भुजाओं वाले भीम और शक्तिशाली भरत जिन्होंने जगत में अपनी शक्ति के डंके बजाये थे उन सब को भी काल के मुंह में जाना पड़ा।

66– वो जिनकी युद्ध शक्ति कई द्वीपों में हा–हाकार मचा रही थी, जिन्होंने रक्त की नदियां बहा कर विजय पताका लहराई थी वह और वह भी जिन्होंने अवश्मेघ यज्ञ कर, सम्रट पद पाया था वह सभी युद्ध वृत्ति महिप और योद्धा सम्राट भी काल को न जीत सके बल्कि समय का शिकार हो गये।

67– ऐसे सहस्त्र सेनापति जिन्होंने कई–कई शत्रु दुर्ग नष्ट किये और बड़े–बड़े शूरवीरों की सेनाओं को नष्ट किया, जिन्होंने आपसी झगड़ों को भी छण भर

में समाप्त नहीं किया बल्कि बड़े-बड़े शूरवीरों की सेनाओं को पराजित किया वे भी काल के सामने बिलखते और गिड़गिड़ाते और उसके मुंह में जाते देखे।

68- वह भी जो युगों राज सिंहासन पर आसीन रहे तथा भांति-भांति के सुखों और भोगों का रस लेते रहे अंत में उनके शव भी नंगे हाथ नंगे पांव जाते देखे। वह हठी भी दीन होकर काल की दाढ़ा के नीचे आ गये।

69- जिन्होंने लूट-लूट कर अपार धन इकट्ठा किया था और अपने द्वार पर सेवा के लिये चन्द्र और सूर्य को खड़ा कर लिया था, जिन्होंने इन्द्र को जीता और मुक्त किया उनको भी काल के आगे बिलखते और मृत्यु के मुंह में जाते देखा।

70- अनेक कल्पों में राम अवतार लेते रहे और सदा ही मर्यादानुसार काल में विलीन होते रहे। अपने ही कई कल्पों में कृष्ण कई बार अवतरित हुए और काल में विलीन हो गये।

71- भविष्य में भी जितने भी देव होंगे सभी अपने साथ एक अवधि का जीवन लेकर आयेंगे और उनको जाना ही होगा। जितने भी बुद्ध तिर्थांकर हुए सभी अन्त को समाप्त हो गये।

72- देवों के राजा इन्द्र भी बार-बार हुए और अपना समय पूरा करके चले जाते हैं। इसी प्रकार दैत्यों के राजा भी ।हरण्कश्यप, रावण आदि। मृत्यु के मुख में समा गये।

73- नरसिंह जैसे अवतार भी काल के अधीन हो गये और बड़े-बड़े कर्ण जैसे दानी काल के वश में आ गये।

74- बावन जैसे ब्राह्मण का भी काल के द्वारा हनन हो गया और महा मच्छ का अवतार काल के जाल में जा फंसा।

75- जिन्होंने भी आज तक जन्म लिया वे काल के फांस में चले गये, जो भी तेरी शरण में आवेंगे वे काल की पीड़ा से मुक्त हो जावेंगे।

भुजन प्रयात छंद का वर्णन

76- चाहे वे देव हों अथवा दैत्य, रंक हों या धनी, पादशाह या उमराव बिना तेरी शरण ग्रहण किये हे भगवन् मृत्यु पीड़ा से बचने का कोई दूसरा उपाय नहीं। फिर दूसरे हजारों उपाय भी क्यों न खोजें जायें।

77- चाहे जंत्र और मंत्र कितने भी उच्चारण किये मये और अनेक विधियां लिखी गईं, जो भी इस संसार में जीव-जन्तु जन्मा वह सब भी अपनी आयु भोग, काल के गाल में समा गये। सिवाय तेरी शरण के उन्हें काल से दण्ड की पीड़ा से कोई बचाव प्राप्त न हो सका।

(गुरु जी नाराज छंद में लिखते हैं)

78– जितने भी राजा, रंक एवं लोक पाल थे सभी को काल खा गया।

79– शस्त्र धारण किये प्रभु की शरण में जो आये तथा जिसने भी काल को स्मरण रखा उन्होंने शांति की खोज कर ली व जगत के विजेता हो गये।

80– विचित्र है तेरी चतुर, चित्रित तिलकधारी परम पवित्र मूर्ती जिसका अलोकिक रुप है, जिसका नाम सुनने मात्र से ही पाप नष्ट हो जाते हैं।

81– बड़े विशाल हैं जिसके लाल–लाल नैन, जिसके मुख की चमक कई चाँदों की चाँदनी को मात करती है। तू वही अनेक पापियों को तारने वाला और पापों का मोचन करने वाला कृपालु है।

। रसावल छन्द ।

82– सब काल के लोक पाल, चन्द्र और सूर्य, इन्द्र और विन्द्र, जो काल के अधीन थे, कहां हैं वो आज।

। भुजंग प्रयाद छन्द ।

83– हे कालों के काल चौदहों दिशाओं में तेरा ही जयकार है। सब चमत्कार तेरे सामने फीके हैं। सूर्य और चन्द्र वंशी, राम और कृष्ण सभी तेरे सामने नतमस्तक खड़े हैं।

। सवैया ।

84– हे भगवन्, जन्म देने और पालनहार विष्णु, जगत को चलाने वाला ब्रह्मा और संहार करने वाले शिव तथा योगी योगेश्वर, लोक परलोक के सुर–असुर, गन्धर्व यक्ष, शेष नाग आदि सभी तो काल के अधीन हैं केवल हे कालों के काल अकाल, तू ही काल से मुक्त है।

85– हे देवों के शस्त्र धारी महादेव। हे सदा ही सब में चलायमान निर्विकार प्रभु मेरा तुम्हें नमन है। आपको, जो स्वयं ही राजसी है, सातविक तथा तामसक है, जो निर्विकार और अनासक्त है, मेरा प्रणाम हो।

86– हे धनुषधारी तेरे द्वारा सबको प्रेम ही प्रेम प्राप्त है, भय नहीं। देवों के देव, वर्तमान और भविष्य के कर्ता, मेरा बारम्बार प्रणाम है तुम्हें।

87– मेरा प्रणाम है शत्रुओं का खण्डन करने वाले कृपाण और कटार को, जो उसी के वेश हैं, जो निर्विकार हैं, उसको भी जो हाथ में दण्ड, धनुष और बाण थामे है तथा जिसकी ज्योति से सब जगत ज्वलंत है।

88– मेरा उसे नमन है, जिसके हाथ में अस्त्र और शस्त्र हैं, जो शत्रुओं को अंगहीन करने की लीला कर देवों को अभय और शक्ति प्रदान कर रही है। गदा, गृष्टि, सहेथी आदि धारण करने वाली महाशक्ति तेरे तुल्य कोई दूसरी शक्ति है ही नहीं। मैं तुम्हें शत–शत प्रणाम करता हूं।

89- हे च'क्र धारी, जिसकी शक्ति अभूतपूर्व है, जिसकी दाढ़ा उग्र महा गृष्टि गाड़ने वाली है, मेरा प्रणाम स्वीकार करो।

90- मैं शस्त्रों और अस्त्रों को, जो दुष्टों का हनन करते हैं तथा उसको जो चौकस और कटिबद्ध होकर शत्रुओं के दांत ख'ट्टे करने हेतु इन शस्त्रों को अपने हाथ में संभाले हुए हैं, नमन करता हूं।

91- तथा उन सब शस्त्रों को, जिनके जो भी नाम हों व जितने अस्त्र अब तक बने, जिनके द्वारा दुष्टों का नाश हुआ हो तथा जो भी बनेंगे उन सबको मेरा नमस्कार है।

92- हे प्रभु मेरे ऊपर अपनी कृपा करो। मैं तो केवल एक तिनके के समान हूं और तेरे जैसा दोनों का दीनदयाल और कोई है नहीं तू मेरे जैसे भूलनहार की भूलों को क्षमा कर। मेरे मन में यदि कोई आशा है तो इसलिये कि तेरा सहारा है। मैं जानता हूं जिसने तेरा सहारा लिया वह हर तरह से सफल हो गया। इस युग में शक्ति ।कृपाण। ही कला है। अतः हे धारी भुजाओं में शस्त्र-अस्त्र युक्त प्रभु मेरा तेरे पर ही भरोसा है। मैं तुझ पर ही आश्रित हूं।

93- तू वही है, जिसने शुम्भ और निशुम्भ को क्षण भर में समाप्त कर दिया। धूम्र लोचन, चुण्ड-मुण्ड और महषसुर जैसे महाबलि दैत्यों को पल भर में नष्ट कर दिया। चामर, छूछक और रक्तवीज जैसे राक्षसों को शीघ्र ही तेरे द्वारा मुक्ति मिली। तेरे जैसा स्वामी जिसके सिर पर हो, उसको कौन सा भय। इस तेरे दास को तेरा ही आसरा है।

94- भगवन् तूने मुन्ध, मधू, कीटप तथा मुर जैसे सैकड़ों दुष्टों का नाश किया। भगवन् तुझको तो किसी आश्रय की आवश्यकता नहीं। तेरे कदम किसी संग्राम में पीछे नहीं हटे। वो दैत्य जो सिन्धु में डूब नहीं सकते, अग्नि बाण जिन्हें जला नहीं सकता वह भी तेरी शक्ति को देखकर मृत्यु के भय और अपनी बल हीन लाज से रण छोड़ कर भाग गये।

95- कुम्भकरण, रावण और महारावण को पल में पछाड़ने वाली शक्ति, वह मेघनाथ जिसने यम को भी जीत लिया था, कैसे कांप गया था तुझे देख कर। कुम्भ अकुम्भ जिन्होंने जगत को जीत लिया, सातों समुद्रों पर जिनका आधिपत्य था और ऐसे और अनेक जिन्होंने तेरी सत्ता से मु ह मोड़ लिया वह स्वयं ही अहंकार की शक्ति से टुकड़े-टुकड़े हो गये।

96- यदि कोई कहे कि मैं काल की कृपाण से बचा हूं और किसी भी कोने में जा छिपे अथवा भागा करे, उसके पहुंचने से पहले ही काल वहां उपस्थित होगा, जिससे वह भागा था। कोई भी तो ऐसा नहीं, जिसको उससे बचने का उपाय मिल गया हो। हे मूर्ख मनुष्य जिससे बचने का कोई उपाय नहीं तू उसकी शरण में क्यों नहीं आता?

97- कोटि-कोटि लोगों ने राम और रहीम को, कृष्ण और विष्णु को उनको देव जान

कर उनकी भली प्रकार से आराधना की। ब्रह्म और शिव की भी स्थापना करते रहे परन्तु काल से कोई न बचा। दूसरे कितनों ने तपस्या और साधना में समय गंवाया परन्तु मृत्यु के आधिपति न बन सके। हाँ फिर दूसरे वाम मार्गी बन, काम की क्रियाओं और युक्तियों से काल के स्वामी बनने की चेष्टा करते रहे परन्तु उनका ये माया जाल तो कसीरे । कौड़ी । के बराबर भी न निकला। उनमें से कोई भी काल के प्रहार से न बचा।

98– हे मानव ऐसे ही अपने को असत्य के मार्ग पर लगा कर समय नष्ट कर रहा है। देव पूजन से तुम ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते। वह देवता, जो काल के गाल में स्वयं बार–बार जाते हैं, तुमको कैसे बचा सकेंगे। जिन वासना युक्त वाम मार्गियों के पीछे भाग रहे हो वह तो स्वयं काम और क्रोध की अग्नि के कुण्ड में लटक रहे हैं। वह तुम्हें भी अपने साथ उसी में डालेंगे। अतः अभी समय है जरा अपनी सुध ले। उस अकाल जी की कृपा ही मांग, जिसकी कृपा दृष्टि के अतिरिक्त कोई भी तेरे लिये उपयुक्त नहीं।

99– और पशु की तरह अज्ञान से युक्त हुआ उस महान शक्ति को, जिसका प्रताप तीनों लोकों में फैला है, तू पहचान नहीं रहा है। अज्ञानी पूजन कर उस प्रभु का, जिसके स्पर्श मात्र से तेरा लोक–परलोक उज्ज्वल हो जायेगा। अतः तू मोह और स्वार्थ का परित्याग कर परमार्थ के मार्ग पर चल, जिससे तेरे पाप भी लजा कर दूर हो जायें और तू उस परम ईश्वर के परमार्थ में विलीन हो। हे जड़ अच्छी तरह समझ ले, पाषाणों में परमेश्वर को मत ढूंढ, अपना समय नष्ट न कर।

100– तू भेखी बना मौन रह कर आत्म स्वाभिमान को नष्ट कर सिर मुंडा शरीर पर धुलि मल कर तन को कठोर यातनाएं देते हुए अथवा बड़ी–बड़ी जटायें सिर पर सजाकर भगवान को धोखा नहीं दे सकता। अतएव मेरे मित्र मेरी बात को ध्यान से सुन। मैं तुम्हें उस प्रभु से एकमय होने का रहस्य बता रहा हूं। प्रभु की बनाई और सजाई हुई इस सारी वसुध्व्य को, जिसके कण–कण में प्रभु स्वयं हैं, प्रीत कर और प्रेम कर। उसके दिए शरीर को अंग–भंग कर सुनन्त ।खतना। करवाने से भगवान प्रसन्न नहीं होगा। वह प्रेम से वश में आता है।

101– हे श्री अकाल स्वरुप अदवायत यदि सारे द्वीप कागज मानें और उन पर तेरी स्तुति लिखने के लिये सातों समुद्रों को मसि मान लें, लिखने के लिए सारी वनस्पति काट कर लेखनी बना लें तथा कई कल्पों तक सरस्वती स्वयं गणेश जी कई–कई हाथ बना कर अखण्ड गति से लिखवाती रहें तो भी हे कालों के श्री काल तेरी बिना कृपा वह स्तुति भी भगवान को प्रसन्न करने में उपयुक्त सिद्ध न होगी। बस केवल तेरी कृपा ही हो, मेरी यही प्रार्थना है।

इति श्री विचित्र नाटक ग्रंथे श्री काल जी की स्तुति,
प्रथम अध्याय सम्पूर्णम शुभम् अस्तु– अफजू–थतथ

श्री विचित्र नाटक

द्वितीय अध्याय

।। चौपाई ।।

तुमरी महिमा अपर अपारा।
जा का लह्यो न किनहू पारा।
देव देव राजन के राजा।
दीन दिआल गरीब निवाजा ।।1।।

।। दोहरा ।।

मूक ऊचरै शासत्र खटि पिंग गिरन चड़ि जाई।
अंध लखै बधरो सुनै जौ काल क्रिपा कराई ।।2।।

।। चौपाई ।।

कहा बुद्ध प्रभ तुच्छ हमारी।
बरनि सकै महिमा जु तिहारी।
हम न सकत करि सिफत तुमारी।
आप लेहु तुम कथा सुधारी ।।3।।

कहा लगै इहु कोट बखानै।
महिमा तोरि तुही प्रभु जानै।
पिता जनम जिम पूत न पावै।
कहा तवन का भेद बतावै ।।4।।

तुमरी प्रभा तुमै बनि आई।
अउरन ते नहीं जात बताई।
तुमरी क्रिआ तुमही प्रभु जानो।
ऊच नीच कस सकत बखानो ।।5।।

शेशनाग सिर सहस बनाई।
द्वै सहंस रसनाइ सुहाई।
रटत अब लगे नाम अपारा।
तुमरो तऊ न पावत पारा ।।6।।

तुमरी क्रिआ कहा कोऊ कहै।
समझत बात उरझ मति रहै।
सूक्ष्म रुप न बरना जाई।
बिरध सरुपहि कहो बनाई ।।7।।

तुमरी प्रेम भगति जब गहिहौ।
छोर कथा सभ ही तब कहिहौ।
अब मैं कही सु अपनी कथा।
सोढी बंस उपजिया जथा ||8||

|| दोहरा ||

प्रिथम कथा संछेपते कही सु हित चितु लाई।
बहुरि बडड़ो बिसथार कै कहिहौ सभी सुनाई ||9||

|| चौपाई ||

प्रिथम काल जब करा पसारा।
ओअंकार से स्त्रिशटि उपारा।
कालसैण प्रथमै भयो भूपा।
अधिक अतुल बलि रुप अनूपा ||10||

कालकेत दूसर भूअ भयो।
क्रूर बरस तीसर जग ठयो।
कालधुज चतुरथ न्रिप सोहै।
जिह ते भयो जगत सभ कोहै ||11||
सहसराछ जा को सुभ सोहै।
सहस पाद जो के तन मोहै।
शेषनाग पर सोइबो करै।
जग तिह शेखसाइ उचरै ||12||

एक स्त्रवण ते मैल निकारा।
ताते मधु कीटभ तन धारा।
दुतीअ कान ते मैलु निकारी।
ता ते भई स्त्रिशटि इह सारी ||13||

तिन को काल बहुर बध करा।
तिन को मेध समुंद मो परा।
चिकन तास जल पर तिर रही।
मेधा नाम तबहि ते कही ||14||

साध करम जे पुरख कमावै।
नाम देवता जगत कहावै।
कुक्रित करंम जे जग मैं करही।
नाम असुर तिन को सभ धरही ||15||

बहु बिचार कह लगै बखानीअत।
ग्रंथ बढन ते अति डरु मानीअत।
तिन ते होत बहुत न्रिप आए।
दच्छ प्रजापति जिन उपजाए ।।16।।

दस सहंस्त्र तिहि ग्रिह भई कंनिआ।
जिह समान कह लगै न अंनिआ।
काल क्रिआ ऐसी तह भई।
ते सभ ब्याह नरेसन दई ।।17।।

।। दोहरा ।।

बनता कद्रु दिति अदिति ए रिख बरी बनाई।
नाग नागरिप देव सभ दईत लए उपजाई ।।18।।

।। चौपाई ।।

ता ते सूरज रुप को धरा।
जा ते बंस प्रचुर रवि करा।
जौ तिन के कहि नाम सुनाऊं
कथा बढन से अधिक डराऊं। ।19।।

तिन के बंस बिखै रघु भयो।
रघुबंसहि जिह जगहि चल्यो।
ता ते पुत्र होत भयो अज बर।
महारथी अरु महा धनुरधर ।।20।।

जब तिन भेस जोग को लयो।
राजपाट दसरथ को दयो।
होत भयो वहि महा धनुरधर।
तीन त्रिआन बरा जिह रुचि कर ।।21।।

प्रिथम जयो तिह राम कुमारा।
भरथ लच्छमन सत्रबिदारा।
बहुत काल तिन राज कमायो।
काल पाइ सुरपुरहि सिधायों ।।22।।

सीअ सुत बहुरि भर दुइ राजा।
राजपाट उनही कउ छाजा।
मद्र देस एस्वरज बरी जब।
भाँति भाँति के जग्ग कीए तब ।।23।।

तही तिनै बाँधे दुइ पुरवा।
एक कसूर दुतीय लहुरवा।
अधिक पुरी ते दोऊ बिराजी।
निरख लंक अमरावति लाजी ।।24।।

बहुत काल तिन राज कमायो।
जाल काल ते अंत फसायो।
तिन ते पुत्र पौत्र जे वए।
राज करत इह जग को भए ।।25।।

कहाँ लगे ते बरन सुनाऊं
तिन के नाम न संख्या पाऊं
होत चहूं जुग मै जे आए।
तिन के नाम न जात गनाए ।।26।।

जो अब तौ किरपा बल पाऊं
नाम जथा मत भाख सुनाऊं
कालकेत अरु कालराई भन।
जिन ते भए पुत्र घर अनगन ।।27।।

कालकेत भयो बली अपारा।
कालराइ जिनि नगर निकारा।
भाज सनौढ़ देस ते गए।
तहो भूप जा बिआहत भए ।।28।।

तिह ते पुत्र भयो जो धामा।
सोढीराइ धरा तिहि नामा।
बंस सनौढ त दिन ते थीआ
परम पवित्र पुरख जू कीआ ।।29।।

ता ते पुत्र पौत्र हुइ आए।
ते सोढी सभ जगत कहाए।
जग मैं अधिक सु भए प्रसिद्धा।
दिन दिन तिन के धन की ब्रिद्धा ।।30।।

राज करत भए विविध प्रकारा।
देस देस के जीत त्रिपारा।
जहाँ तहाँ तिह धरम चलायो।
अत्र पत्र कह सीस ढुरायो ।।31।।

राजसूअ बहु बारन कीए।
जीत जीत देसेस्वर लीए।
बाजमेध बहु बारन करे।
सकल कलूख निजु कुल के हरे ।।32।।

बहुर बंस मैं बढो बिखाधा।
मेट न सका कोऊ तिह साधा।
बिचरे बीर बनैतु अखंडल।
गहि गहि चले भिरन रन मंडल ।।33।

धन अरु भूम पुरातन बैरा।
जिन का मूआ करति जग घेरा।
मोह बाद अहंकार पसारा।
काम क्रोध जीता जग सारा ।।34।।

।। दोहरा ।।

धनि धनि धन को भाखोऐ जा का जगतु गुलामु।
सभ निरखत या को फिरै सभचल करत सलाम ।।35।।

।। चौपाई ।।

काल न कोऊ करन सुमारा।
बैर बाद अहंकार पसारा।
लोभ मूल इह जग को हूआ।
जासो चाहत सभै को मूआ ।।36।।

इति स्त्री बचित्र नाटक ग्रंथे शुभि बंस बरननं
दुतीआ धिआई ।।2।। अफजू ।।37।।

श्री विचित्र नाटक

द्वितीय अध्याय- भावार्थ

1- हे देवों के महादेव, राजन के महाराजा, दीन दयाल, कृपा सिंधु तुम्हारे अनन्त गुणों की, अपार कृपा की कोई थाह नहीं।

2- यदि, हे काल, तुम्हारी कृपा हो जाय, तो वो, जिसे बोलने की शक्ति नहीं, छहों शास्त्रों का पाठ करने लगे। पिंगलें पहाड़ों पर चढ़ जायें, नेत्रहीनों को दिखाई देने लगे और बहरों को सुनाई पड़ने लगे।

3- हे ईश मेरे जैसे तुच्छ बुद्धि वाला व्यक्ति तेरी इस असीम कृपा के क्या गुणगान कर सकता है। केवल बिनती ही है अगर तेरी मेरे पर कृपा हो जाय तो मैं अपनी आत्म कथा पूर्ण करने में योग्य हो जाऊं। तू स्वयं कथा को, उसकी लिखावट को सुधारने की भी जिम्मेदारी ले ले।

4- मैं केवल कीट मात्र हूं तेरी शक्ति तेरे गुण असीम हैं। तू पिता है मैं पुत्र हूं भला पुत्र पिता के जन्म के विषय में क्या कह सकता है अथवा क्या ज्ञान कर सकता है। तू ही सब जानने वाला है इसलिए मैं तुझे आह्वान दे रहा हूं।

5- तुम्हारे तेज को, तेरी प्रभा को, किसके पास शक्ति और चक्षु हैं जो देख और वर्णन कर सके। तुम्हारी कृपालुता की चर्चा भी कोई कहाँ तक करे। तुम्हारी उपमा भी किसी से क्या दे। तुम सबसे ऊंपर हो। मेरे जैसा छोटी-मोटी बुद्धि रखने वाला तेरे इस विराट स्वरुप और महान गुणों का बखान क्या करेगा। मैं जो थोड़ा बहुत तेरी महानता की चर्चा करने में समर्थ हुआ हूं वह भी तेरी कृपा से ही।

6- शेष नाग की ही बात है, जिसके सहस्त्र शीश हैं और दो सहस्त्र जिव्हया और दीर्घ काल से ही तेरे अपार गुणों और सद्कामों की चर्चा और गुणगान कर रहा है फिर वह तो थाह के निकट नहीं पहुंच पाया।

7- इतने विस्तृत हो तुम कि तुम्हारे विषय में सूक्ष्म अर्थात् छोटी सी क्रिया को भी सोचने लगें तो भी बुद्धि की सीमा समाप्त होकर मतिमन्द हो जाती है। फिर तुम्हारे विस्तृत रुप की चर्चा करने का तो साहस कौन करे। हाँ केवल अब तो सगुण स्वरुप का बखान कर रहा हूं।

8- जिस समय मैं तेरे प्रेम में रंग कर तेरा साक्षात्कार कर लूंगा उस समय तेरे इस महान विराट स्वरुप की विस्तार से चर्चा करुगा अभी तो तेरी कृपा से ही उस सोढी वंश की चर्चा, जिसमें मेरा जन्म हुआ है, कर रहा हूं।

9- वो कथा अभी संकोच वश चित्त से हित करता हुआ प्रारम्भ तो करता हूं, आगे जाकर संभवतः विस्तार से लिख सकूं।

जैसा कि वेदान्त कहता है अथवा शास्त्र प्रमाणित है कि ब्रह्म से पूर्व "ऊँ" की

ध्वनि हुई। मिश्री, ईसाई, यहूदी आदि ये ही कहते हैं कि सर्वप्रथम "शब्द" की ध्वनि हुई। किताब भी वर्णन करती है कि अल्लाह के द्वारा सबसे पहले शब्द की ध्वनि हुई, जो थी "कुन"। गुरु ग्रंथ साहब ने "ओं कार" को ही उत्पत्ति का स्त्रोत कहा है। इसी प्रकार गुरु गोविन्द सिंह जी लिखते हैं।

10– जब प्रथम समय विस्तार हुआ तो "ओं कार" की ही ध्वनि से सृष्टि की रचना हुई उस समय सर्व प्रथम राजा कालसेन अथवा विष्णु हुआ वो अत्यन्त ही सुन्दर और बलशाली भूप था।

11– कालकेत नाम ।ब्रह्मा। से दूसरा प्रभावी राजा बना, क्रूर वर्ष ।शिव। ने फिर इस जगत को चलाने के लिए राज्य संभाला और चौथा स्थान कालध्वज नाम से ।महाविष्णु। राजा के रुप में जाना गया, जिससे ये सारा जगत पुनः विस्तार में आया। ।पुरातन तत्व वेत्ता विद्वान इस प्रकार लिखते हैं कि ईश्वर की लीला तथा इच्छा से प्रथम "ॐ" की ध्वनि से संसार की रचना हुई, फिर जीव में एक से अनेक होने की इच्छा ने जन्म लिया, जिससे ये सारा विस्तार हुआ, विष्णु अवतरित हुए, जिनकी महिमा अद्भुत है। उनकी नाभि से कमल पर ब्रह्मा प्रकट हुए फिर स्थिरता का प्रतीक शिव तीसरे राजा के रुप में कार्य को संभालने लगा। चौथे राजा के रुप में कालकेत प्रजापति बना, जिसके राज्य की सहस्त्र कन्याओं द्वारा पुनः विस्तार आया।

12– हे भगवन् तुम्हारा क्या विस्तृत रुप है। सहस्त्रों चक्षुओं से देखता हुआ तथा हजारों कार्यशील चरण तेरे ही शरीर का अंग हैं। सब कुछ करने की क्षमता रखते हुए सहस्त्र सिरों और जिव्हाओं वाले शेष नाग को शैय्या बना कर शान्त रुप से आनन्दित हो रहे हो। इसलिए तो जगत में तुम शेष शैय्या गामी के नाम से विख्यात हो।

शास्त्र प्रमाणित होने के कारण ये स्वतः स्पष्ट संकेत है "विष्णु"–

उकति बिलास के चण्डी चरित्र में गुरु जी ने पहले अध्याय के आठवें श्लोक में इस प्रकार से वर्णन किया है:

"हरि सोय रहे सज शैय्यन तहां,
जल जाल कराल विशाल जहां,
भयो नाथ सरोज ते विश्व करता,
श्रुति मैल ते तैत दजे जुगता।" ।8।
"मधू कीट नाम रखें तिनके,
अति दीर्घ देह भये जिनके,
.... ।9।

गुरुजी ने सर्व, "शक्तिमान प्रभु" से कुछ अलग नहीं हो सकता, इस बात पर बल दिया, जो कुछ है उस प्रभु की ही अपनी लीला है अथवा अद्वायत को उक्त शब्दों में कितनी सुन्दर छवि से निखारा है।

"बैर बढ़ाय लड़ायें सुरासुर,
आपही देखत बैठ तमाशा।"
की पंक्ति लिखकर और स्पष्ट किया है।

13— एक कान से निकले मैल मात्र से मधू कैटभ राक्षस बन गये और दूसरे श्रवण के मैल से ही यह सारी सृष्टि बनी।

14— समय की गति, काल ने मधू कौटभ का बध किया और उनके शरीर से बहने वाली चर्बी अथवा मस्तक से निकलने वाली मेधा, इस बहुत बड़े जलाशय पर एक कोने में तैरने लगी और फिर धीरे—धीरे जम कर पृथ्वी के रुप में आ गयी। तभी तो पृथ्वी मेधा के नाम से जानी जाती है।

15— इस प्रकार इस पृथ्वी का निर्माण हुआ। इस जगत में जिन्होंने जीवन को साधा, परोपकार और सेवा भाव को जीवन का लक्ष्य बनाया, वे देवता बन गये इसके विपरीत भावना रखने वाले असुर अथवा दैत्य नाम से जाने जाने लगे।

पं0 नारायण सिंह जी ने इसकी व्याख्या में ऋग वेद के दषन अमूल्यास से दी है तथा गरुढ़ पुराण से भी इसकी चर्चा में लिखा है कि ब्रह्मा के दायें और बायें पैर के अगूंठे से दषन और उसकी स्त्री का जन्म हुआ। गुरु गोविन्द सिंह जी ने 24 अवतारों में शिव अवतार अध्याय में इस विषय का बड़ा रुचि पूर्ण वर्णन विस्तार पूर्वक किया है।

16— कालसेन से परिवार आगे बढ़ा और उनके परिवार से ही राज चलाने वाले नृप जन्म लेते रहे। दच्छ प्रजापति भी उसी परम्परा से हुए। मैं इसको संक्षेप में लिख रहा हूं, इस भय से कि ये ग्रंथ अधिक लम्बा न हो जाय।

17— दच्छ से बहुत बड़ा परिवार बना। उसके गृह अथवा राज्य में अजोड़ और अत्यन्त सुन्दर तथा योग्य दस हजार कन्याओं ने जन्म लिया। ईश्वर की कृपा से वे सब बड़े योग्य राजकुमारों आदि से ब्याही गयीं।

18— दच्छ की अपनी चार कन्यायें, बनिता, कद्रू, दिती और आदिती का कष्यप ऋषि से वरण हो गया। बनिता के गर्भ से अरुण और गरुड़ ने जन्म लिया। कद्रू ने सर्पो को जन्म दिया, दिती ने देवों को और आदिती से दैत्यों का जन्म हुआ।

19— दिती के पुत्रों से ही सूर्य वंश चला, उस वंश का भी बड़ा विस्तार हुआ। परन्तु मैं सब नाम नहीं लिखूंगा, भय वही है कि ग्रंथ न बढ़ जाय।

20— उन्हीं के सूर्य वंश से रघु ने जन्म लिया फिर उस पराक्रमी राजा के नाम पर रघुवंश ही विख्यात हो गया, जिसका पुत्र राजा अज बड़ा ही योद्धा था। उसका पुत्र दशरथ हुआ।

21— राजा अज ने सन्यास लिया और अपने उत्तराधिकारी के रुप में दशरथ को राज्य दिया। महान् धनुष धर, दशरथ ने मनभावन तीन सुन्दरियों से विवाह कर लिया।

22- दशरथ की प्रथम पत्नी कौशल्या से राजकुमार राम ने जन्म लिया, कैकेयी से भरत और तीसरी पत्नी सुमित्रा ने लक्षमण और शत्रुघन को जन्म दिया। दशरथ की तरह समय पाकर राम अपने भाइयों सहित राज्य भोगते हुए पुत्रों को उत्तराधिकारी बना, सुर पुर सिधार गये।

राम का विवाह सीता जी से, भारत का विवाह माण्डवी, लक्षमण का उर्मिला तथा शत्रुघ्न का विवाह श्रीश्रुति से हुआ, इनकी संतानों को भारत के अलग-अलग क्षेत्रों पर राज्य करने हेतु राज्य का वितरण किया।

23- सीता पुत्र, लव और कुश को मद्र देश, जहाँ के राजाओं की कन्याओं से इनका विवाह हुआ था, पर राज्य करने हेतु, क्षेत्र दिया। वहीं पर उन्होंने अनेक प्रकार के दान, यज्ञ और तप किये।

मद्र देश की व्याख्या मत्स्य पुराण के अनुसार सिंध और गन्धार से लगता हुआ क्षेत्र इस समय के उत्तर प्रदेश की सीमा से परे का सारा क्षेत्र आता है। महाभारत के अनुसार भारत के उत्तर की ओर का क्षेत्र है। आधुनिक पश्चिमी विद्वान भी सतलज से लेकर सिंध तक के क्षेत्र को मद्र देश मान रहे हैं। कुछ का कहना है कि इसकी सीमा रावी नदी तक थी अर्थात् अविभाजित पंजाब और सिंध मिलाकर मद्र देश बनता है।

24- वहीं पर अब दोनों भाइयों ने अर्थात् लव ने लाहौर और कुश ने कसूर के नाम से अत्यन्त शोभावाले दो नगर बसाये, जिनको देखकर लंका एवं इन्द्रपुरी भी लज्जायमान होती थीं।

25- बहुत समय तक उन्होंने राज्य किया। अन्ततः वह भी काल के फांस में आ गये और उनके पुत्र-पौत्रों ने उसी क्षेत्र में राज-काज चलाया।

26- कहां तक उनके पुत्र-पौत्रों की चर्चा करें। ये ग्रंथ तो नामों से ही भर जाय। चारों युगों तक उनका राज चलता रहा, उनके नामों की गणना नहीं हो सकती।

27- हे ईश्वर यदि तेरी कृपा का आश्रय प्राप्त हो जाय तो जितनी बुद्धि है, उसके अनुसार कुछ विशेष नामों का कथन करता हूं। कुश के सिंहासन पर कालकेत तथा लव के सिंहासन पर बैठने वाले कालराय के नाम से विख्यात हुए। उनके अपने-अपने अनेक संतानें हुईं।

28- कालकेत बहुत बलवान हुआ, जिसने कालराय की राजधानी को भी अपने राज्य में मिला लिया और कालराय भाग कर सनौढ़ देश आ गए। वहाँ के राजा ने उनका स्वागत किया और अपनी कन्या से विवाह कर दिया और इनकी संतान बड़े महापुरुषों के रुप में वर्णित की जाती है।

सनौढ देश का क्षेत्र मथुरा, भरतपुर से लेकर अमर कोट तक का क्षेत्र है।

29- उस राजपुत्री से जो पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम सोढी राय रखा, और उसी के नाम से उसका वंश सनौढ वंश जाना जाने लगा, जिसकी स्थापना स्वयं महापुरुषों ने की थी।

30– उस सोढी राय के पुत्र–पौत्र हुए और उनका नाम सारे जगत में विख्यात हो गया। ईश्वर ने धन–धान्य से उन्हें भरपूर किया।

31– वह अनेक प्रकार से राज्य करते रहे और धीरे–धीरे अनेक राज्यों को जीतने लगे। सब जगहों पर धर्म का राज्य चलाने लगे और क्षत्रपति बन गये।

32– उन्होंने बहुत से शत्रु राज्यों को राजसु यज्ञ करके अपने राज्य में मिला लिया फिर अश्वमेघ यज्ञ किया और अपने कुल के किये पापों का नाश करवाया।

सत्यपथ ब्राह्मण के अनुसार इस यज्ञ का प्रारम्भ सोम यज्ञ से होकर सोत्र मणी यज्ञ के साथ समाप्त होता है और इस यज्ञ को पूर्ण होने में कई वर्ष लगते हैं।

33– पुनः सनौढ़ वंश में आपसी झगड़े प्रारम्भ हो गये मगर वे झगड़े किसी के निपटाये नहीं निपटे। इस कार्य में कई विद्वान लोग भी लगे कि आपसी झगड़े निपट जायें परन्तु "विनाश काले विपरीत बुद्धि" वो शूरवीर, जिनसे शत्रु कांपते थे, एक दूसरे का विनाश करने हेतु मूर्खों की भाँति मण्डल में एक दूसरे के पीछे भागते रहे।

पुरातन से ही धन और भूमि आपसी शत्रुता का कारण बने रहे हैं। इसी मोहमाया के जाल में फंस, एक दूसरे को अपने एक घेरे में लेना चाहते रहे हैं। वास्तविकता ये है कि विनाश का कारण सदा से बीज रुप में विषयों के प्रति संगति अर्थात् चाह ही रही है। चाह काम को, काम क्रोध को, क्रोध लोभ को, और लोभ मोह को जन्म देता आया है, जो बिनाश का कारण बना। अर्जुन को उपदेश देते हुए भगवान श्री कृष्ण ने गीता के दूसरे अध्याय के श्लोक–62 और 63 में इसका बड़ा शुद्ध वर्णन किया है।

"ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोअभिजायते।" ।62।
"क्रोधादभवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रशादबुद्धि नाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।" ।63।

गुरु अर्जुन देव जी ने भी सुख मणि साहब के छठवें श्लोक में इसी की व्याख्या करते हुए प्रभु से प्रार्थना की है कि हे प्रभु हमें इससे बचाना। लिखा है:

"काम क्रोध और लोभ मोह बिनस जाय अहंमेव,
नानक प्रभ शरणागति कर प्रसाद गुरु देव।।"

34– ये स्थिति राम की संतान की भी हो रही थी। कितनी दूरगामी दृष्टि है गुरु की, जिस बात की चर्चा गुरु जी ने 300 वर्ष पूर्व की वह आज शत प्रतिशत लागू होती है।

गुरु जी व्यंग्य से कहते हैं ये धन और भूमि ही हमको सदा से और सहज से अपना दास बना लेती है तो क्यों न हम इसी को प्रणाम करें। गुरु जी आगे फिर लिखते हैं कि धन और भूमि की प्राप्ति की धुन में खोया, अथवा जिनके पास है, वो उनकी सेवा में लगे रहते हैं और फिर अपने से अधिक धनवालों की खोज में रह कर उनको झुक–झुक कर सलाम करते हैं।

35– कितना बड़ा व्यंग्य है और कितनी बड़ी चोट है पूंजी पति और पूंजी वादिता पर।

36– गुरु अध्याय को समाप्त करते हुए लिखते हैं कि काल का कोई समय नहीं, कोई सीमा नहीं, कोई अन्त नहीं। उसके पास न शस्त्र हैं न अस्त्र। तुम अपने ही अज्ञान से पतित होकर स्वयं का विनाश करते हो और काल के मुख में स्वेच्छा से एक दूसरे को धकेल देते हो।

इति श्री विचित्र नाटक का वंश वर्णन नाम दूसरा अध्याय पूर्ण हुआ। ।11।–।137।

श्री विचित्र नाटक

तीसरा अध्याय

।।भुजंग प्रयात छंद।।

रचा बैर बादं बिधाते अपारं।
जिसै साधि साकिओ न कोऊ सुधारं।
बली कामरायं महा लोभ मोहं।
गयोकउन बोरं सु याते अलोहं ।।1।

तहा बीर बंके बकै आप मद्धं।
उठै शसत्र लै लै मचा जुद्ध सुद्धं।
कहूं खप्परी खोल खंडे अपारं।
नचै बीर बैताल डउरु डकारं ।।2।।

कहूं ईस सीसं पुऐ रुड मालं।
कहू डाक डउरु कहूं कं बितालं।
चवी चावडी अं किलंकार कंक्र
गुथी लुत्थ जुत्थे बहे बीर बंकं ।।3।।

परी कुट्ट कुट्टं रुले तच्छ मुच्छं ।
रहे हाथ डारे उभै उरध मुच्छं।
कहूं खोपरी खोल खिंगं खतंगं ।
कहूं खत्रीअं खग्ग खेतं निखंगं ।।4।।

चवी चांवडी डाकनी डाक मारै।
कहूं भैरवी भूत भैरों बकारै।
कहूं बीर बैताल बंके बिहारं।
कहूं भूत प्रेतं हसै मास हारं ।।5।।

।।रसावल छंद।।

महाबीर गज़्जे।
सुणै मेघ लज्जे।
झंड गडड गाढे।
मंडे रोस बाढे ।।6।।

क्रिपाणं कटारं ।
भिरे रोस धारं ।
महांबीर बंकं ।
भिरे भूम हंकं ।।7।।

मचे सूर शसत्रं ।
उठी झार असत्रं ।

क्रिपाणं कटारं ।
परी लोक मारं ||8|| /भुजंग प्रयात छंद/

हलब्बी जुनब्बी सरोही दुधारी ।
बही कोप काती क्रिपाणं कटारी ।
कहूं सैहथोअं कहूं सुद्ध सेलं ।
कहूं सेल सांगं भई रेलपेलं ||9||

सरोख सूर साजिअं ।
बिसारि शंक बाजिअं ।
निशंक शसत्र मारही ।
उतार अंग डारहीं ||10||

कछू न कान राखहीं ।
सु मारि मारि भाखहीं ।
सु हाँक हाठ रेलियं ।
अनंत शसत्र झेलियं ||11||

हजार हूर अंबरं ।
विरुद्धकै सुअंबरं।
करुर भाँत डोलही ।
सु मार मार बोलही ||12||

कहूं कि अंगि कट्टीअं ।
कहूं सरोह पट्टीअं ।
कहूं सु मास मच्छीअं ।
गिरे सु तच्छ मुच्छीअं ||13||

ढमक्क ढोल ढालयं ।
हरोल हाल चालयं ।
झटाक झट्ट बाहीअं ।
सु बीर सैन गाहीअं ||14||

नवं निसाण बाजिअं ।
सु बीर धीर गाजिअं ।
क्रिपाण बाण बाहही ।
अजात अंग लाहही । ||15||

विरुद्ध क्रुद्ध राजियं ।
न चार पैर भाजियं ।
संभार शसत्र गाजही ।

सु नाद मेघ लाजही । ।।16।।

हलंक हाँक मारही ।
सरक्क शसत्र झारहो ।
भिरे बिसारि शोकियं ।
सिधारि देव लोकियं ।।17।।

रिसे बिरुद्ध बोरियं ।
सु मारि झारि तोरियं ।
शबद संख बज्जियं ।
सु बीर धीर सज्जियं ।।18।।

।।रसावल छंद।।

तुरी संख बाजे ।
महांबीर साजे ।
नचे तुंद ताजी ।
मचे सूर गाजी ।।19।।

झिमी तेज तेगं ।
मनो विज्ज बेगं ।
उठै नद्द नादं ।
धुनं न्रिबिखादं ।।20।।

तुटै खग्ग खोलं ।
मुखं मार बोलं ।
धका धीक धक्कं ।
गिरे हक्क बक्कं ।।21।।

दलं दीह गाहं ।
अधो अंग लाहं ।
प्रयोध प्रहारं ।
बकै मार मारं ।।22।।

नदी रकत पूरं ।
फिरी गैणि हूरं ।
गजे गैण काली ।
हसी खप्पराली ।।23।।

महां सूर सोहं ।
मंडे लोह क्रोहं ।
महां गरब गज्यं ।
धुणं मेघ लज्यं ।।24।।

छके लोह छक्कं ।
मुखं मार बक्कं ।
मुखं मुच्छ बंकं ।
भिरे छाड शंकं ।।25।।

हकं हाक बाजी ।
घिरी सैण साजी ।
चिरे चार ढूके ।
मुखं मार कूके ।।26।।

रुके सूर संगं।
मनो सिंध गंगं ।
ढहे ढाल ढक्कं ।
क्रिपाणं कड़क्कं ।।27।।

हकं हाक बाजी ।
नचे तुंद ताजी ।
रसे रुद्र पागे ।
भिरे रोस जागे ।।28।।

गिरे सुद्ध सेलं ।
भई रेल पेलं ।
पले हार नच्चे ।
रणं बीर मच्चे ।।29।।

हसे मासहारी ।
नचे भूत भारी।
महां ढीठ ढूके ।
मुखं मार कूके ।।30।।

गजै गैण देवी ।
महां अंस भेवी ।
भले भूत नाचं ।
रसं रुद्र राचं ।।31।।

भिरै बैर रुज्झै ।
महां जोध जुज्झै ।
झंडा गडड गाढे ।
बजे बैर बाढे ।।32।।
गजं गाह बाधे ।
धनुरबान साधैं ।

बहे आप मद्धं ।
गिरे अद्धं अद्धं ॥33॥

गजं बाज जुज्झै ।
बली बैर रुज्झे ।
न्रिभै शसत्र बाहै ।
अभै जीत चाहै ॥34॥

गजे आन गाजी ।
नचे तुंद ताजी ।
हकं हाक बज्जी ।
फिरै सैन भज्जी ॥35॥

मदं मत्त माते ।
रसं रुद्र राते ।
गजं जूह साजे ।
भिरे रोस बाजे ॥36॥

झमी तेज तेगं ।
घणं बिज्ज बेगं ।
बहे बार बैरी ।
जलं जिउ गंगैरी ॥37॥

अपो आप बाहं ।
उभै जीत चाहं ।
रसं रुद्र राते ।
महां मत्त माते ॥38॥

॥भुजंग छंद॥

मचै बीर बीरं अभूतं भयाणं।
बजी भेर भुंकार धुक्के निसाणं ।
नवं नंद्द नीसाण गज्जे गहीरं ।
फिरै रुड मुंडं तनं तच्छ तीरैं ॥39॥

बहे खग्ग खेतं खिआलं खतंगं ।
रुले तच्छ गुच्छं महा जोध जंगं ।
बंधे बीर बाना बडे ऐंठिवारे ।
घुमै लोह घुट्टं मनो मत्तवारे ॥40॥

उठी कूह जूहं समर सार बज्जियं ।

किधो अंत के काल को मेघ गज्जियं ।
भई तीर भीरं कमाणं कड़क्कियं ।
बजे लोह क्रोहं महां जंगि मच्चियं ॥41॥

बिरच्चे महां जंग जोधा जुआणं।
खुले खग्ग खत्री अभूतं भयाणं ।
बली जुज्झ रुज्झै रसं रुद्र रत्ते ।
मिले हत्थ बक्खं महा तेज तत्ते ॥42॥

झमी तेज तेगं सु रीसं प्रहारं ।
रुले रुड मुंडं उठी शसत्र झारं ।
बबक्कंत बीरं भभक्कंत घायं ।
मनो जुद्ध इंद्रं जुट्यो ब्रितरायं ॥43॥

महां जुद्ध मच्चियं महां सूर गाजे ।
अपो आप मै शसत्र सों शसत्र बाजे ।
उठे झार सांगं मचे लोह क्रोहं ।
मनो खेल बासंत माहंत सोहं ॥44॥

॥रसावल छंद ॥

जिते बैर रुज्झं ।
तिते अंत जुज्झं ।
जिते खेत भाजे ।
तिते अंति लाजे ॥45॥

तुटे देह बरमं ।
छुटी हाथ चरमं ।
कहूं खेत खोलं ।
गिरे सूर टोलं ॥46॥

कहूं मुछ मुक्खं ।
कहूं शसत्र सुक्खं ।
कहूं खोल खग्गं ।
कहूं परम पग्गं ॥47॥
गहे मुच्छ बंकी ।
मंडे आन हंकी ।
ढका ढुक्क ढालं ।
उठे हाल चालं ॥48॥

/भुजंग छंद

।।छपै छंद।।

खुले खग्ग खूनी महांबीर खेतं।
नची बीर बैतालयं भूत प्रेतं।
बजे डंक डउरु उठे नाद संखं। ।।49।।
मनो मल्ल जुट्टे महां हत्थ बक्खं

जिनि सूरन संग्राम सबल सामुहि ह्वै मंड्यो।
तिन सुभटन ते एक काल कोऊ जिअत न छंड्यो।
सभ खत्री खग खंड खेत भू मंडप अहुट्टे।
सार धार धर धूम मुकत बंधन ते छुट्टे।
ह्वै टूक टूक जुज्झे सभै पाव न पाछै डारियं। ।।50।।
जैकार अपार सु धार हू अबा शिवलोक सिधारियं

।।चउपई।।

इह बिध मचा घोर संग्रामा।
सिधए सूरि सूरि के धामा।
कहा लगै बह कथो लराई। ।।51।। ।।भुजंग प्रयात छंद।।
आपन प्रभा न बरनी जाई

लवी सरब जीते कुशी सरब हारे।
बचे जे बली प्रान लै कै सिधारे।
चतुर बेद पठियं कीयो काशि बासं। ।।52।।
घनें बरख कीने तहाँ ही निवासं

।।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे लवी कुशी बरननं नामु त्रितीआ धिआई
समापतम सतु सुभम सतु ।।3।। अफजू।।189।।

श्री विचित्र नाटक

तीसरा अध्याय

1– विधाता ने अपनी लीलानुसार अनेक प्रकार के संघर्ष एक दूसरे के प्रति रचे। अगर संसार को गतिशील रखना हो तो यह आवश्यक ही है, अड़चनें, क्रोध और ईर्ष्या को जगाना वैसे ही है जैसे नदी के जल को गति देने के लिए बाँध बाँधना है और जल को एकत्र करके नीचे की ओर छोड़ना जैसे जल में इससे आगे गति आती है वैसे ही संसारिक रचना भी गतिशील हो जाती है। राम के पुत्रों की संतानों में ऐसी बैर भावना, ईर्ष्या और द्वेष पनपा कि कोई योग्य व्यक्ति भी उसे रोक न सका। एक दूसरे से संघर्ष और युद्ध होने लगे।

2– दूसरे श्लोक में गुरु जी ने प्राचीन युद्ध का अद्‌भुत वर्णन किया है, जो ईसा से दो–ढाई हजार वर्ष पूर्व हुआ। रणभूमि में गठीले सजीले वीर चिंघाड़-चिंघाड़ कर एक दूसरे पर टूटे पड़ रहे हैं, घनघोर युद्ध प्रारम्भ हो गया है। कहीं बड़े चौड़े फल के तीक्ष्ण तीरों वाली वाहिनी सर पर लोहे के कवच डाले जय–जयकार करती कार्यरत है तो कहीं हाथों में दुधारी खण्डें लिये दूसरी वाहिनी अपार हुंकारों के साथ वार–वार पर वार कर मृत्यु के गीत गा रही है। ऐसा लगता है ये सब शिव के वीर गण हैं, जिसमें नन्दी नथने फैलाये फुंकार रहा है, भिरंगी, रिटी टुण्डी आदि शिव का तांडव कर रहे हैं, उनका नेतृत्व कर रहे हैं बेताल। रुद्र का डमरु युद्ध की ध्वनि बजाकर इन सब के हाथों और पैरों को गति दे रहा है।

3– कहीं शंकर हेतु मुण्ड माला बनाती हुई ढाकनियाँ, बेसुरा डमरु पीटती हुई हींग, शिलिंग च मुण्डाय ...

के मंत्रों का भंयकर गायन कर रही थीं जो समझ में तो नहीं आता था परन्तु उनके झुण्ड गा–गा कर किलकारियाँ लगा रहे थे। देवों और दानवों की लाशों के ढेरों के ढेर लग गये थे जिसमें किसी का सर, तो किसी की टांग, तो किसी का पैर कटा पड़ा था, कहीं बे सिर का शव भी पड़ा था, सब आपस में गुडडमुडड हो रहे थे। आकाश में गिद्ध और किंकनिंग जैसे अनेकों पक्षी मानव मांस के ढेरों पर मंडरा रहे थे।

4– बड़ा घमासान युद्ध पड़ा। अनेकों रणवीरों की खोपड़ियाँ गेदों की तरह उछल रही हैं उनके हाथों से गिरे शस्त्र भयंकरता के स्वर में बदल रहे हैं।

5– मांसाहारी पक्षियों की भयंकर डरावनी आवाजों के साथ मद में बदमस्त भैरों अपने सब रुपों में ।त्रिपुर, कोलिस, रुद्र तथा नित्य भैरवीर। भयानक राग अलाप रहे हैं और भूत आज विकराल के रुप में सामने खड़ा अट्टाहस कर रहा है।

6– बड़े–बड़े महावीरों की गर्जन सुनकर एक बार तो मेघ भी शरमा गया। एक ओर हाथों में अनेक प्रकार के ध्वज लिये विजय घोष करते हैं। दूसरा पक्ष जिसे जीतने की प्रबल इच्छा है, क्रोध से हा–हाकार मचा उठता है।

7- रोष से भरी हाथों में कृपाणें और कटारें सम्भाले एक बार तो सर पर केसरी साफा बाँधे ऐसे टूट पड़े हैं मानों भूकम्प आ गया हो।

8- अब आपस में शस्त्र भी इस भंयकरता से टकरा रहे हैं कि उनसे अग्नि की चिन्गारियाँ निकलती हुई प्रत्यक्ष देखी जा सकती हैं। दोनों ओर के वीर ऐसे सट रहे हैं कि शत्रु की पहचान किये बिना ही कृपाणों को लेकर चारों ओर अन्धाधुन्ध नाचते हुए ताण्डव नृत्य कर रहे हैं।

9- श्याम देश की बनी खड़ग "हलवी" पर्वतीय प्रदेश आरमीना ।जहाँ पर सब यहूदी पहली बार आकर बसे थे । की बनी "जुन्नबी" दुधारी मगर पतली तलवार तथा कोई वाहिनी राजस्थानी नागिन की तरह बल खाती तीखां दुधारी लम्बी "सुरोही" का प्रयोग कर रही थी तो किसी ओर क्रुद्ध वीर कृपाण कटार और काती के साथ ही जूझ रहे हैं। बहुतों के हाथों में श्री साहब ही है। कोई-कोई सैली पकड़ कर ही वार कर रहा है तो कोई बरछी के प्रहार से बेध रहा है।

10- वीर स्नेह मुक्त और भय मुक्त होकर निशंक हो शत्रु के अंग काट-काट कर फेंक रहे हैं।

11- कान में न सुनने वाला शोर उठा है। मारो-मारो कि चिल्लाहट मची है। टिड्डी दल की भाँति एक दल दूसरे दल पर हमला बोल रहा है।

12- हर वीर गति प्राप्त करने वाले का आकश में अप्सरायें आगे बढ़कर स्वागत करती हुई वर माला पहना रही हैं। इन देव कन्याओं की संख्या हजारों में है, जो हाथों में वर माला लिए स्वयंवर रचाये वीर पुरुषों की प्रतीक्षा कर रही हैं और वीर गति पाने वाले योद्धा रणभूमि में नितान्त मारो-मारो चिल्ला रहे हैं। ।हर वीर गति पाने वाला अपनी सेना में ऐसे सैनिकों का, जिनका धर्म से नाता नहीं जुड़ा है, उनकी मनोस्थिति के मुताबिक वीर गति पाने के बाद अप्सराओं के दृष्य दिखाने की आवश्यकता को गुरु जी ने महसूस किया कि उनकी प्रेरणा के लिए ऐसे ही दृष्य दिखाना आवश्यक है। अतएव कई स्थानों पर अप्सराओं और परियों आदि का दृश्य गुरु जी ने रणभूमि में लड़ते हुए वीरों को दर्शायें हैं।

13- रणभूमि का दृष्य बड़ा ही भयंकर हो रहा है। कितने ही योद्धा अंग हीन हो गये हैं। किसी के सिर की केशों सहित खाल उतर गई है तो किसी का सारा शरीर ही मांस के लोथड़े की भाँति रणभूमि में मूर्छित पड़ा है।

14- रण वादनों की ध्वनि तेज हो गई है। एक ओर की वाहिनी के सैनिकों के पाँव उखड़ गये हैं और दूसरे पक्ष की सेना शीघ्र ही इसका लाभ उठाने के लिए अपने आक्रमण में तीव्र गति ले आई है।

15- वादकों के स्वरों में भी अब गति अधिक तीव्र हो गई है। योद्धाओं का उत्साह बढ़ रहा है, जो धीमी गति से युद्ध कर रहे थे अब तो वे भी गरज रहे हैं। कृपाणों को हिला-हिला कर शत्रु पक्ष को ललकार रहे हैं।

16– इनका वेग मानों चार पगों पर अजीब प्रकार के करतब दिखाते हुए शस्त्र चला रहे हैं कि एक बार तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे मेघ फट रहा हो।

17– स्वर्ग द्वार में प्रवेश की होड़ में शोक रहित होकर गर्जन करते हुए "सड़ाक" से अपनी तलवारें म्यान से खींच कर शत्रु पर टूट पड़े हैं।

18– अवसर की भयंकरता तो भीष्ण है। वीरों के मुख क्रोध से लाल हैं। तीरों की बौछार हो रही है। शंख हृदय विदीर्ण करने वाले स्वरों में बज रहे हैं मगर योग्य योद्धा धैर्य को हाथ से नहीं जाने दे रहे हैं।

19– वो शूरवीर, जो जीवन दान देकर भी विजय प्राप्त करने का प्रण लेकर आये थे, स्वयं ही नहीं उनके घोड़े भी दीवाने हो रहे हैं। रणभेरी और शंख के नाद उनके पागलपन को और भी बढ़ावा दे रहे हैं।

20– उनकी तेग ऐसे चमक रही है जैसे नभ से बिजली कौंध रही हो अथवा बाढ़ ग्रस्त नदी का जल नाद कर रहा हो अथवा नर विशाद ध्वनि होने लगी हो।

21– शत्रु इस प्रति आक्रमण से अवाक् रह गया है। उनके उत्साहपूर्ण रणघोष और तीव्रता एक बार फिर भारु हो गई है।

22– उनकी गर्जन कि "हमने मैदान मार लिया, विजयी हो रहे हैं" कहते हुए लम्बे–लम्बे शस्त्रों का प्रयोग कर धड़ों से सिर अलग कर रहे हैं।

23– ऊपर के दाँये हाथ में खड़ग, निचले में पदम है बायें में ऊपर कटारी और निचले में रक्त रंजित खपरी लिये, काले वस्त्रों पर गले में मुण्डों की माला सजाये, वक्ष में सिंह शाला और शेर की सवारी किये राक्षसों की छाती पर ठोकर मारती हुई अपनी आठों योगनियों सहित ।रुद्राई, उग्रदन्ती, महाकाली, भरमारी, महारात्रि, भरवी, भीमा तथा भद्रकाली । लाल नेत्रों के साथ सर्पों से केशों को सजाकर अट्टास करती माँ कालिका रक्त की बहती नदी से प्रकट हुई । आकाश में देवता भी चकित होने लगे हैं।

। देव पक्ष के लोग पुनः शक्तिशाली हो गये हैं ।

24– चमकते हुए कवच पहने मेघ से भी अलग ध्वनि करते हुए देव गण स्वाभिमान के साथ आगे बढ़ रहे हैं।

25– लोहे से लोहा टकरा रहा है। मारो–मारो का नाद भयंकर हो गया है। देवगण मूंछों पर ताव देकर निशंक होकर टूट पड़े हैं।

26– चारों ओर से शत्रु सेना को घेर कर ये घोड़ों से सजी बड़े वेग के साथ विजय गीत गाती, आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ी है।

27– दोनों पक्ष तलवारों से युद्ध करने लगे हैं। चमकती हुई ढालें थिरकती हुई कृपाणों के वारों को रोकने का यत्न कर रही हैं। कृपाण आपस में टकरा–टकरा कर टूट रही हैं।

28- रुद्र रस अर्थात क्रोध में आकर ताण्डव नाच होने लगा है। रस नौ प्रकार के हैं और गुरु गोविन्द सिंह जी ने अपनी कविताओं में इन नौ ही रसों का प्रयोग समय व स्थान के अनुसार किया है। रुद्र शिव का नाम है और शिव प्रलय के समय जब ताण्डव नृत्य करते हैं और जो स्वर और शब्द उस समय उच्चरित होते हैं उसे रुद्र रस कहते हैं और गुरु जी ने इस रस का अधिकतम प्रयोग किया है। घोड़े पिछले खुरों पर खड़े हैं अनेक प्रकार के युद्ध नाद बज उठे हैं क्रोध की सीमा टूट रही है।

29- नोजे और बरछियों का प्रयोग होने लगा है। एक मस्ती है अपनी ही तरफ मांसाहारी पशु पक्षी भी नाच – नाच कर झपट रहे हैं अपने शिकार को, जिसे उन्होंने मारा नहीं।

30- आज मांसाहारी जीवों की जैसे दावत हो। परन्तु उनकी नीयत का क्या करें इतना होते हुए भी एक दूसरे को नोंच रहे हैं। दया आती है इन पशु–पक्षियों पर आपस की होड़ देख कर।

31- भयंकर वातावरण बना है, क्रुद्ध शिव के मस्तक से महाकाली प्रकट हो रही है तथा प्रलय से पूर्व के समय में होने वाले शिव का महा ताण्डव प्रारम्भ होकर रुद्र रस का स्रोत फूट पड़ा है।

32- झंडे गाड़े जा रहे हैं, महायुद्ध का अंत समय आने वाला प्रतीत होता है। यद्यपि शत्रुता के भाव से सब निर्मोही हो गये हैं।

33- भयानक धनुषों से भयंकर वाण साँपों की भाँति एक दूसरे को बेध रहे हैं। वीरों के शव टुकड़े–टुकड़े होकर गिर रहे हैं।

34- साथ ही साथ हाथियों और घोड़ों के शव भी टीलों के समान सारी रणभूमि में बिखरे पड़े हैं और दोनों तरफ युद्ध जीत लेने की समान इच्छा से एक भयंकर युद्ध होने लगा है।

35- हर व्यक्ति गाज़ी । विपक्षी को मारकर । दीवानों की तरह वार–पर–वार कर रहा है। एक भगदड़ मची है इन्सानों और उनके वाहनों की।

36- क्रोध बुद्धि को मन्द तो करता ही है। हार–जीत के विचार को एक ओर रख केवल नष्ट करने का विचार प्रबल हो गया है।

37- जैसे जल पर गनगेरी तेजी से इधर–ऊधर भागती हुई कपड़ा बुनते दिखाई पड़ती है इसी प्रकार से युद्ध भूमि में शस्त्रों के चलन से उत्पन्न होती हुई चमक प्रतीत होती है।

38- एक मस्ती छा गई है युद्ध जीत लेने की तीव्र इच्छा के कारण। सचमुच ही शिव साक्षात् प्रकट हो गया है।

39- युद्ध की नौबत और रणभेरी की हुंकारवीरों के हाथों और पैरों को, जो थक गये थे गतिशील कर रही है। आशचर्यजनक द्रश्य है। बिना मुण्ड के धड़ भाग रहे हैं

और तीरों पर टंगें सिर आकाश में उड़ते दिखाई दे रहे हैं। पृथ्वी पर बिना रुड ।धड़। के मुंड बिना मुंड ।सिर। के रुड ऐसा भयानक दृश्य उत्पन्न कर रहे हैं मानों अभी भी प्रलय का प्रकोप जारी है, जो युद्ध में विजय का विचार लेकर आये थे व भी रणभूमि में अपना रक्त संचित कर सदा के लिये विलीन हो गये।

40- जैसे मधुशाला में मधु पी कर मस्ती से पियक्कड़ झूमते फिरते हैं, बिना होश के गिरते भी हैं। वैसे ही कोई तो हाथों में खड़ग लेकर तो कोई हाथ में धनुष लेकर तीर चलाते घूम रहे हैं और बहुत से लोग उनकी चोट से रणभूमि में गिरे पड़ेहैं।

41- अचानक एक शोर सा उठा है कोई भयंकर अस्त्र फूटा है। धनुष वाण स्वयं टूटने लगे हैं। मृत्यु का बादल छा गया है प्रलय की याद आने लगी है। लोहे से लोहा बज उठा है।

42- इस महा भयंकर युद्ध में अब दृश्य बदल रहा है जो क्षत्री अब तक लोहे से लोहा लड़ा रहे थे अब मल्लयुद्ध कर रहे हैं। बल का प्रयोग अब शारीरिक शक्ति से नापा जा रहा है।

43- ऐसा लग रहा है जैसे बृत्रराए और इन्द्र का युद्ध प्रारम्भ हो गया है दोनों पक्ष बराबर आ गये हैं। किसी भी पक्ष की विजय अथवा पराजय का आभास नहीं हो पा रहा है। चारों ओर नर मुंड लुढ़कते दिखाई पड़ते हैं। हर ओर से शस्त्रों की आवाज खनकती सुनाई पड़ती है।

इस श्लोक में गुरु गोविन्द सिंह को श्रीमद्भागवत गीता का कितना ज्ञान था अथवा भारतीय मूल्यों से कितने परिचित थे, स्पष्ट हो जाता है। आज भी केशधारी सिख समाज अथवा अन्य भारतीय समाज अपने उस धरोहर को इतना जानता है क्या, जिसकी चर्चा गुरु कविता में करते हैं।

कथा बड़ी रुचि पूर्ण है। पंडित नारायण सिंह जी ने भी श्री विचित्र नाटक सटीक में की है तथा भागवत के दः सकन्द अध्याय से यह ली गई है।

व्रित्र दानव जो त्विष्टा का पुत्र था रीति अनुसार जैसे इन्द्र को जल का देव माना है वेद ने इसे खुश्की का देव भी स्वीकार किया है, उसे संक्षिप्त में लिखता हूं। श्री मद्भागवत में जो कथा है उसमें लिखा है कि एक बार इन्द्र तथा ब्रहस्पति में आपस में झगड़ा हो गया। इन्द्र उस शक्ति से भली-भाँति परिचित था ही वह ब्रह्मा के पास युद्ध जीतने का उपाय पूछने चला गया तो ब्रह्मा ने उसे त्विष्टा के पास जाकर पूछने की राय दी। त्विष्टा ने विश्वरुप को गुरु बना कर उससे यज्ञ करवाने की सलाह दी। विश्वरुप ने यज्ञ प्रारम्भ किया इस की सूचना ब्रहस्पति को मिल गई तो उसने अपने दूतों को भेजा उन्होंने विश्वरुप को समझाया कि उसकी पुत्री तो दैत्यों की बेटी थी तो क्या वह अपने नौनिहाल के कुल को समाप्त करेगा। बस फिर क्या था विश्वरुप ने बीच-बीच में दैत्यों के नाम की आहुति भी देना प्रारम्भ कर दिया। इन्द्र की जब इस भेद का पता चला तो उसने विश्वरुप का सिर उतार दिया। जब इसकी सूचना तविष्ट ।त्विष्टा। को मिली तो मन्त्रों द्वारा होम से एक शक्ति उत्पन्न की जिसका नाम ब्रित्रासुर अथवा ब्रितरायं रखा

उसी ने इन्द्र से भयंकर युद्ध किया। जब इन्द्र हारने लगा तो विष्णु के पास भागा गया। विष्णु ने सलाह दी कि वह ऋषि दधीचि से याचना करे अगर उसे उनकी हड्डियों की गदा मिल जाय तब ही वह विजयी हो सकता है। अपनी ओर से भी इन्द्र की सिफारिश कर दी। तब दधीचि ने अपना जीवन दान देकर गदा हेतु अपनी हड्डियां दीं और इन्द्र को विजय मिली। उसी गदा से ब्रित्रासुर की मृत्यु हो गई। यह बड़ी ही महत्व की कथा है। इसका एक-एक शब्द तथा पात्र बड़े ही महत्व का है इसलिये इसे यहाँ लिखना आवश्यक है।

44- भयंकर युद्ध प्रारम्भ हो गया। रक्त रंजित सैनिक का सैनिक से और शस्त्र का शस्त्र से टकराव ऐसा लगता है मानों आज होली है तथा यह सब भले पुरुष होली के रंग में रंगे हैं।

45- शत्रु से जूझने वाले इसमें शक नहीं शहीद हो गये । वैसे भी सब को एक दिन यह शरीर तो छोड़ना ही है मगर उनकी गणना वीरों में हुई, और जो रण से भागे उनका सिर शर्म से सदा के लिये झुक गया।

46- अब शरीर की शक्ति समाप्त हो गई है हाथों से धनुष गिर गये हैं रणभूमि शवों और छूटे-फूटे शस्त्रों से भर गई है।

47- वीरों के सिर एक ओर हैं तो शस्त्र और उनके खोल बिना किसी मालिक के मूक पड़े हैं।

48- परन्तु अभी भी कोई-कोई कहीं-कहीं अपनी मूंछों को ताव देते हुए और अपनी आन का परिचय देते हुए ढालों पर वार सह रहे हैं।

49- जैसे मल्लयुद्ध में पहलवान एक दूसरे को गिरते- गिराते जब तक जाते हैं तो हाथ मात्र चलाते रहते हैं वही हालत थी इन बचे सैनिकों की। बलवान योद्धा अब रक्त में सने युद्ध भूमि में पड़े थे और अब युद्ध भूमि में बावन बीसे बैतालों भूतों-प्रेतों का राज्य था वह नृत्य कर रहे थे। हाँ जो कोई बच गये थे और जिन्हें विजय मिली थी शंख और डमरु का विजय नाद करते जा रहे थे।

50- गुरु जी इस युद्ध के अध्याय के अंत में वर्णन कर रहे हैं यह बड़े महत्व का है और यह स्पष्ट करता है कि गुरु जी अपने सैनिकों का मार्ग दर्शन किस मनोवैज्ञानिक आधार पर करते रहे हैं। जिन शूरवीरों ने इस संग्राम में शत्रु से लोहा लिया था वह सभी काल के मुंह में चले गये। सब क्षत्री हाथों में खड़ग लेकर युद्ध करते हुए खेत हुए थे, धूम्र से मुक्त अग्नि (उन सब का धा संस्कार में हो वह सब मुक्ति को प्राप्त हो जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो गये थे) धूम्र रहित अग्नि का अर्थ है तलवार रुपी चमकती हुई तेज धार की अग्नि। वह सब ऐसे थे जो टुकड़े-टुकड़े तो हो गये मगर अपना पग पीछे नहीं ले गये अतः उनका इस लोक तथा परलोक दोनों में जयजयकार है उनका धाम वासदेव का धाम है।

51- इस प्रकार वह सूर्य वंशी वीर वीरगति प्राप्त कर अपने धाम ।स्वर्ग लोक। पधारे। सूर्य वंशी होने के नाते मैं अधिक चर्चा उस युद्ध की नहीं करता नहीं तो अपने मुंह बड़ाई का दोष प्राप्त होगा।

श्री विचित्र नाटक

चतुर्थ अध्याय

अस्तु

लव के वंशज सब जीते तथा कुश वंश के वीर पराजित हो गये, जो बच गये थे।कुश वंश के। वह वेद का ज्ञान प्राप्त करने काशी चले गये और वहाँ बहुत समय तक चारों वेदों का स्वयं तथा उनकी संतान पठन पाठन करती रही। इधर लाहौर को अपनी राजधानी बनाकर कसूर के क्षेत्र को भी अपने में मिलाकर कुशी वंशी राज करने लगे।

। भुजंग प्रयात छंद ।।

जिनै वेद पठियो सु वेदी कहाए।
तिनै धरम के करम नीके चलाए।
पठे कागदं मद्र राजा सुधारं।
अपो आप मो बैर भावं बिसारं ।। 1 ।।

न्रिपं मुकलियं दूत सो काशि आयं।
सभै वेंदियं भेद भाखे सुनायं।
सभै वेद पाठी चले मद्र देसं।
प्रनामं कीयो आनकै कै नरेसं ।। 2 ।।

धुनं बेद की भूप ता ते कराई।
सभै पास बैठे सभा बीच भाई।
पड़े सामवेदं जुजरबेद कत्यं।
रिगंबेद पढियं करे भाव हत्यं ।। 3 ।।

।। रसावल छंद ।।

अथरबेद पढ्डियं।
सुणे पाप नटठियं।
रहा रीझ राजा।
दीआ सरब साजा ।। 4 ।।

लयो बन्नबासं।
महां पाप नासं।
रिखं भेस कीयं।
तिसै राज दीयं ।। 5 ।।

रहे होर लोगं।
तजे सरब सोगं।
धनं धाम त्यागे।
प्रथं प्रेम पागे ।। 6 ।।

॥ अड़िल ॥

बेदी भयो प्रसनं राज कह पाइकै।
देत भयो बर दान हीऐ हुलसाइके।
जब नानक कल मै हम आन कहाई है।
हो जगत पूज करि तोहि परमपद पाइ है ॥ 7 ॥

॥ दोहरा ॥

लवी राज दे बन गए बेदिअन कीनो राज।
भाँति भाँति तिनि–भोगियं भूअ का सकल समाज ॥ 8 ॥

॥ चउपई ॥

त्रितिय बेद सुनबे तुम कीआ।
चतुर वेद सुनि भूअ को दीआ।
तीन जनम हमहूं जक धरिहै।
चौथे जनम गुरु तुहि करिहै ॥ 9 ॥

उत राजा काननहि सिधायो।
इत इन राज करत सुख पायो।
कहा लगे करि कथा सुनाऊं
ग्रंथ बढन ते अधिक डराऊं ॥ 10 ॥

॥ इति श्री विचित्र नाटक ग्रंथे बेद पाठ भेट राज चतुरथ धिआई समापतम सतु सुभम सतु ॥4॥ अफजू ॥199॥

श्री विचित्र नाटक
चतुर्थ अध्याय

लवी ।लव के वंशज। तो जीते थे तथा कुशी हार खाने के बाद वाराणसी में वेद शोध एवं अध्ययन हेतु काशी चले गये थे यह चर्चा गुरु जी ने पिछले अध्याय में की इस चौथे अध्याय में सूत्र को पकड़ते हुए गुरु जी लिखते हैंः

1– जिन्होंने अर्थात् कुशी वंशजों ने काशी में जाकर वेदों को पढ़ा वह वेदी कहलाने लगे उन्होंने धर्म के कार्य में रुचि ली और उस क्षेत्र में बहुत कार्य किया। इधर पंजाब में लवी राज करते रहे तभी उन्हें अपने ही भाइयों के विषय में पता चला कि उनसे विवाद खड़ा हो गया था तथा वह (उनकी सन्तान) काशी में हैं। पिछले सारे भेद–भाव मिटा कर उसी समय एक विनय पत्र लिखा कि पंजाब में वह सब बेदी भी आवें तथा जो द्वेष –भावना कभी बनी थी वह सब समाप्त हो जावें।

2– उसी समय एक ब्राह्मण को पत्र देकर काशी भेजा जिसने उन सोडीयो ।लवी। की मन से प्रेम स्नेह की भावना की चर्चा खोल कर की तथा उन्हें पंजाब चलने का परामर्श दिया।

यह सुनकर कि हमें हमारे भाई बुला रहे हैं, वेद पाठ करने वाले बेदी पंजाब आने को तैयार हो गये तथा राजधानी में आकर राजा को नमस्कार किया।

3– सोडी राजा ने प्रार्थना की कि वह वेद पाठ की ध्वनि नित्य करें। फिर राज सभा में लवी–कुशी दोनों परिवार वाले एकत्र बैठें।

सर्व प्रथम बेदियों ने सामवेद का बड़ा सुन्दर गायन किया उसकी समाप्ति पर यजुर्वेद के शब्दों का गायन किया ऋग के मंत्रों रिचाओं को विधिपूर्वक हाथों के इशारों से योग्य स्वरों में किया तथा इसी श्रद्धा से उस मंत्र के भाव भी प्रकट होने लगे।

4– जब उन्होंने अर्थवेद का विचार किया तो राजा के मन में वैराग्य आ गया तथा उसने बेदियों को राज देने का संकल्प कर लिया तथा उसकी घोषणा भी कर दी।

5– लवी राजा ने संन्यास लेकर वन का मार्ग पकड़ा तथा अपने और अपने सहृदयों के पापों का नाश इस प्रकार कर लिया और ऋषि भेष धारण कर कुशियों को राज देकर स्वयं वन चले गये।

6– सारी प्रजा राजा को मना कर रही थी कि वह वन न जावे पर उसने किसी की बात नहीं मानी और हर प्रकार से अनासक्त होकर धन–परिवार को त्याग, बेदियों को राज–पाट दे, वन जाने की तैयारी कर ली।

7– बेदी राज प्राप्त करके बड़े प्रसन्न हो गये और प्रसन्न हो, आशीर्वाद दिया तथा वरदान दिया कि "हे सोडी राजन जब हम कलयुग में आकर नानक नाम से जाने

जावेंगे तथा गुरु ग'द्दी के मालिक होंगे तब तुम्हारे वंश को ऐसा राज देंगे कि जिससे संसार द्वारा आपका पूजन होगा। तब हम इस ऋण से मुक्त होंगे।

8- राजा लव की संतान को राज दे, स्वयं वन चले गये। बेदियों ने योग्य प्रकार से राज पर शासन किया तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के राजसी सुख भी भोगे।

9- फिर पुनः कुशियों को वरदान के रुप में कहा- राजन तुमने तीन वेद बड़े चाव से सुने चौथे वेद को सुनकर तुमने हमें पृथ्वी ।राज। सौंप दिया। ऐसे ही कलयुग में जब हम तीन बार नानक गुरु बनेंगे (अंगद फिर अमर दास और फिर राम दास की ज्योति में रहे)। राज तुम को सौंप देंगे। गुरु नानक ने अपने बेटों को ग'द्दी नहीं दी। उनके दो पुत्र थे 'बाबा श्री चन्द और लखमी चन्द' मगर अंगद देव को गुरु बना दिया गुरु अंगद के भी दो पुत्र थे तातू जी और दासू जी पर उन्होंने भी ग्द्दी गुरु अमर दास जी को ही दी। गुरु अमर दास के भी दो पुत्र थे मोहन जी और मोहरी जी। मगर उन्होंने भी ग्द्दी रामदास को दी और अपनी बेटी का विवाह भी उनसे कर दिया। यह सोडी वंश के थे। गुरु गोविन्द सिंह तक ग्द्दी गोविन्द वंश में ही रही। इस तरह चौथे गुरु सोडी राम दास ने ग'द्दी प्राप्त कर ली।

10- उधर राजा बन गये इधर यह राज्य करते रहे और सुख को प्राप्त करते रहे और बहुत दिन तक राज्य किया। ग्रंथ बढ़ जाने के भय से कथा संक्षिप्त करता हूं।

: इति वचित्र नाटकं ग्रंथे
चतुर्थ अध्याय समाप्त मस्तु
संभृभमास्तु ।।4।। अफजू ।199।

श्री विचित्र नाटक

पांचवा अध्याय

।। नराज छंद ।।

बहुरि बिखाध बाधियं।
किनी न ताहि साधियं।
करंम काल यौ भई।
सु घूम बंस ते गई ।।1।।

।।दोहरा। बिप्र करत भए सूद्र ब्रिति छत्री बैसन करम।
बैस करत भए छत्रि ब्रिति सूद्र सु दिज को धरम ।।2।।

।। चौपाई ।।

बीस गाव तिन के रहि गए।
जिन मो करत क्रिसानी भए।
बहुत काल इह भांति बितायो।
जनम समै नानक को आयो ।।3।।

।।दोहरा।। तिन बेदियन के कुल बिखे प्रगटे नानक राइ।
सभ सिक्खन को सुख दए जह तह भए सहाई ।।4।।

।।चौपाई।।

तिन इह कल मौ धरमु चलायो।
सभ साधन को राहु बतायो।
जे ता के मारगि महि आए।
ते कबहूं नहीं पाप संताए ।।5।।

जे जे पंथ तवन के परे।
पाप ताप तिन के प्रभ हरे।
दूख भूख कबहूं न संताए।
जाल काल के बीच न आए ।।6।।

नानक अंगद को बपु धरा।
धरम प्रचुरि इह जग मो करा।
अमरदास पुनि नामु कहायो।
जन दीपक ते दीप जगायो ।।7।।

जब बर दानि समै बहु आवा।

रामदास तब गुरु कहावा।
तिहबर दानि पुरातनि दीआ।
अमरदासि सुरपुरि मगु लीआ ।।8।।

श्री नानक अंगदि करि गाना।
अमरदास अंगद पहिचाना।
अमरदास रामदास कहायो।
साधनि लखा मूढ़ नहि पायो ।।9।।

भिंन भिंन सभहूं करि जाना।
एक रुप किनहूं पहिचाना।
जिन जाना तिन ही सिध पाई।
बिन समझे सिध हाथ न आई ।।10।।

रामदास हरि सों मिल गए।
गुरता देते अरजनहि भए।
जब अरजन प्रभ लोक सिधाए।
हरिगोबिंद तिह ठाँ बैठारे ।।11।।

हरिगोबिंद प्रभ लोक सिधारे।
हरीराइ तिह ठाँ बैठारे।
हरीक्रिशन तिन के सुत वए।
तिन ते तेगबहादर भए ।।12।।

तिलक ज्रंऊ राखा प्रभ ताका।
कीनो बड़ो कलू महि साका।
साधनि हेति इती जिनि करी।
सीसु दीआ परु सी न उचरी ।।13।।

धरम हेत साका जिनि कीआ।
सीसु दीआ परु सिररु न दीआ।
नाटक चेटक कीए कुकाजा।
प्रभ लोगन कह आवत लाजा ।।14।।

।।दोहरा।। ठीकरि फोरि दिलीस सिरि प्रभ पुर कीआ पयान।
तेगबहादर सी क्रिआ करी न किनहूं आन ।।15।।

तेगबहादर के चलत भयो लगत को सोक।
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुरलोक ।।16।।

।। इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे पातिशाही बरननं नाम पंचमो धिआइ
समापतम सतु सभम सतु ।।5।। अफजू ।।215।

श्री विचित्र नाटक

पांचवा अध्याय

1– ना ही समय की चाल रुकी न ही मनुष्य का स्वभाव ही बदला अस्तु ।बेदी। कुश के वंशज सोडियों से राज प्राप्त कर उसका विस्तर न कर सके वरन् आपस में ही संघर्ष करने में जुट गये, विनाश काले विपरीत बुद्धि इसी अनुसार सारा राज्य नष्ट–भ्रष्ट हो गया।

2– समय चक्र ऐसा आया कि ब्राह्मण की शुद्र वृत्ति हो गई और क्षत्री अपने देश की रक्षा का धर्म छोड़कर वैश्य हो गये। वैश्यों की वृत्ति अपने स्वाभाविक धर्म के विपरीत क्षात्र वृत्ति बन गई और शूद्र अपने को विप्र समझ बैठे।

(गुरु जी ने स्पष्ट किया है इस दोहरे में कि विनाश का काल आने के लक्षण ही हैं कि लोग अपना स्वाभाविक धर्म छोड़ कर दूसरे में रुचि लेने लगते हैं अर्थात् धोबी के कुत्ते की तरह न घर के रहते हैं न घाट के)

3– तीसरी चौपाई में गुरु देव लिखते हैं कि कुशी केवल बीस गाँवों के ही स्वामी रह गये और उसी में खेती–बाड़ी कर अपनी जीविका चलाने लगे। अतः चिर काल तक यही स्थिति रही और फिर समय आया कि जब गुरु नानक ने कालू बेदी के घर जन्म लिया।

4– सूर्य वंश के रघुवंशी कुश की नस्ल में जो काशी जा कर वेद के ज्ञाता कुशी थे, उनके घर में नानक का अवर्तन हुआ जिस नानक के द्वारा पुनः सब सिखों को सुख प्राप्त हुआ तथा लोक परलोक में गुरु सहाय रहे।

5– उन्होंने ही इस घोर कलयुग में पुनः धर्म का चलन किया। साधू जनों का मार्ग दर्शन किया। जो श्री गुरु नानक के मार्ग पर चले वह पाप के कष्ट से मुक्त हो गये।

6– जिस–जिस ने भी तेरे पथ का अनुसरण किया, ईश्वर ने उनको पाप एवं भय से मुक्त कर दिया। वह मृत्यु के भय से डरे नहीं। वह सम्पन्न और सुखी जीवन भोगते रहे।

7– नानक ने अंगद को आशीर्वाद दिया। जिसने इस जगत में धर्म को प्रचुर किया उन्हीं की ज्योति ने ही पुनः अमर दास नाम कहलवाया। जिन्होंने इस प्रकार एक दीप से दूसरे को प्रकाशित किया।

8– वह वरदान जो गुरु नानक ने पूर्व जन्म में लव वंश को दिया था कि "तीन वेदों के पाठ को सुन जैसे तुमने राज्य हमको दिया है इसी तरह चौथी ज़्योति तुम्हारे वंश में ।कुश। जगेगी और फिर वह आगे गुरु वंश चलावेंगे" जब उस वरदान का समय आया तो सोडी राम दास (जो कुश वंशी थे) गुरु कहलाये गुरु अमर दास जी ने उस वरदान को पूर्ण किया और स्वयं स्वर्गवासी हो गये।

9– इस प्रकार गुरु गोविन्द सिंह लिखते हैं कि हमने श्री नानक को अंगद के रुप में

देखा और श्री अमर दास को वही अंगद ही समझा है अमर दास जी ने ही राम दास कहलवाया। साधू जन अर्थात् बुद्धिमान पुरुषों ने सब में एक ही ज्योति के दर्शन किये। मंद बुद्धि पुरुष इस भेद को न पा सके।

10- कुछ ही थे जिन्हें श्री नानक से राम दास तक एक ही ज्योति देखने की योग्यता प्राप्त हुई। बहुतों ने केवल ऊपरी वेश देखा और भिन्न रुप एवं भिन्न व्यक्तित्व समझते रहे। जिन्होंने एक ही ज्योति में देखा वे योग्य थे, सिद्ध थे क्योंकि जो इस ज्ञान को नहीं समझ लेता वह सिद्धि को प्राप्त नहीं हो सकता।

11- जब राम दास जी की ज्योति हरि में लीन हो गयी तो अर्जुन को गुरु गद्दी दे दी गई तथा जब गुरु अर्जुन प्रभु लोक बुला लिये गये तो उसी स्थान पर हरि राय जी को बैठा दिया गया।

12- हरिगोविन्द जी की जीवन यात्रा पूर्ण हुई तो हरि राय ने वही कार्य हाथ में लिया। उनके सुत हरि कृष्ण जी ने कार्य को आगे प्रगति दी, जिनके पश्चात् तेग बहादुर जी ने मार्ग दर्शन दिया।

13- कलयुग में भारतीय मूल्यों की रक्षा करने हेतु एक बहुत बड़ी घटना घटी। वही थे गुरु तेग बहादुर जिन्होंने जनेऊ, चोटी एवं साधुओं की रक्षा हेतु अपना शीश बलिदान कर दिया पर मुख से सी तक भी न की।

करामात का अर्थ था औरंगजेब की तलवार गुरु के शीश पर असर न करती अथवा टूट जाती। उसका प्रभाव सिख समाज पर अच्छा भी पड़ सकता था कि गुरु बड़े शक्तिशाली हैं दूसरा प्रभाव औरंगजेब पर पड़ता और वो गुरु घर को शक्तिशाली मान कर गुरु का भी सम्मान करता और सिखों को भी मुगलों से सुख मिलने लगता और तीसरा समाज गुरु तेग बहादुर के आशीर्वाद से वंचित न होता परन्तु इस प्रश्न का उत्तर गुरु जी ने स्वयं ही अपने शब्दों में दिया है।

14- करामात दिखानी एक नाटक हो जाता और गुरु नट नहीं होता, अपना आदर्श प्रस्तुत करता है, जो जन साधारण अपने जीवन में धारण करे अर्थात गुरु तेग बहादुर भी मार्ग दर्शन देना चाहते थे कि स्वधर्म के लिए मरना चमत्कार दिखाने से कहीं श्रेष्ठ है। गुरु तेग बहादुर जी के पथ प्रदर्शन वाली बात गुरु जी ने पूर्व में ही स्पष्ट कर दी है कि सब गुरुओं में गुरु नानक की ज्योति ही प्रज्ज्वलित है। जो मार्ग दर्शन हुआ वह गुरु नानक की गद्दी से हुआ किसी व्यक्ति विशेष से नहीं। उसी गद्दी पर गुरु गोविन्द सिंह विराजमान हुए जिस पर गुरु ग्रंथ साहब जो विराजित हैं और मार्ग दर्शन सदा प्राप्त होता है। अतः व्यक्ति निष्ठा के स्थान पर धर्म निष्ठा को ही श्रेष्ठ माना गया है। औरंगजेब को प्रसन्न करने की बात कहीं नहीं आती न ही सिखों को तुर्कसरकार से सुख उपलब्ध करने की चाह कभी गुरु घर में रही। लक्ष्य तो था धर्म को पुर्नस्थापित करने का, देश ने परकिय सत्ता को मिटा कर स्वराज्य लाने का उसके लिये बलिदान होना ही आवश्यक था। अतः गुरु जी ने चौदहवें श्लोक के अंत में यह स्पष्ट किया कि नाटर-चेटक आदि कुकर्म हैं जो हरि भक्त को और देश भक्त को कभी नहीं करने चाहिए। बल्कि स्वधर्म के लिए (महाजनों येनगतः सः पंथः) जिस राह पर महापुरुष

चलें वह मार्ग बनता है। गुरु जी ने देश हित एवं धर्म हित हेतु बलिदान का मार्ग खोला तथा तमाशे करके अपनी हंसी कराने के लज्जा जनक कुकर्म से समाज को सावधान किया।

15− गुरु तेग बहादुर जी अपने शरीर को एक मिट्टी के बरतन का टूटा टुकड़ा ही समझते थे और उस टुकड़े को भी औरंगे के सिर पर मार कर फोड़ लिया और स्वयं प्रभु के चरणों में लीन हो गये।

कलयुग में एकसा पहली बार ही हुआ था कि किसी ने देश एवं स्वधर्म की रक्षा हेतु अपने प्राणों की आहुति स्वयं अपने हाथों से दी हो।

16− गुरु तेग बहादुर के इस अद्‌भुत कौतुक से सारा भारत चकित रह गया सारे जग में हा हा कार मच गया और स्वर्ग में स्वागत हेतु जय जय कार होने लगा।

इति बचित्र नाटक ग्रंथे पंचमो धियाए समाप्त शभासतू ।5। ।115।

श्री विचित्र नाटक

छठवां अध्याय

।। चौपाई ।।

अब मैं अपनी कथा बखानो।
तप साधत जिह बिधि मुहि आनो।
हेमकुंट परबत है जहां।
सपतश्रिंग सोभित है तहां ।।1।।

सपतश्रिंग तिह नामु कहावा।
पंडराज जह जोगु कमावा।
तह हम अधिक तपस्सिआसाधी।
महांकाल कालका अराधी ।।2।।

इह बिधि करत तपस्सिआ भयो।
द्वै ते एक रुप ह्वै गयो।
तात मात मुर अलख अराधा।
बहु बिधि जोग साधना साधा ।।3।।

तिन जो करी अलख की सेवा।
ता ते भए प्रसंनि गुरदेवा।
तिन प्रभ जब आइस मुहि दीया।
तब हम जनम कलू महि लीया ।।4।।

चित न भयो हमरो आवन कहि।
चुभी रही स्त्रुति प्रभु चरनन महि।
जिउ तिउ प्रभ हमको समझायो।
इम कहि कै इह लोक पठायो ।।5।।

जब पहिले हम स्त्रिशटि बनाई।
दईत रचे दुशट दुखदाई।
ते भुजबल बवरे ह्वै गए।
पूजत परम पुरख रहि गए ।।6।।

।। अकालपुरख बाच इस कोट प्रति ।।

।।चौपाई।।

ते हम तमकि तनक मो खापे।
तिन को ठउर देवता थापे।

ते भी बल पूजा उरझाए।
आपन ही परमेशर कहाए ॥7॥

महांदेव अचुत कहवायो।
बिशन आप ही को ठहरायो।
ब्रह्मा आप पारब्रह्म बखाना।
प्रभ को प्रभू न किनहूं जाना ॥8॥

तब साखी प्रभ अशट बनाए।
साख नमित देबे ठहराए।
ते कहै करो हमारी पूजा।
हम बिन अवरु न ठाकुरु दूजा ॥9॥

परम तत्त को जिनि न पछाना।
तिन करि ईशर तिन कह माना।
केते सूर चंद कह मानै।
अगनहोत्र कई पवन प्रमानै ॥10॥

किनहूं प्रभु पाहन पहिचाना।
न्हाति किते जल करत बिधाना।
केतक करम करत डरपाना।
धरमराज को धरम पछाना ॥11॥

जे प्रभु साथ नमित ठहराए।
ते हिआं आइ प्रभू कहवाए।
ताकी बात बिसर जाती भी।
अपनी अपनी परत सोभ भी ॥12॥

जब प्रभ को न तिनै पहिचाना।
तब हरि इन मनुछन ठहराना।
ते भी बसि ममता हुइ गए।
परमेशर पाहन ठहराए ॥13॥

तब हरि सिद्ध साथ ठहिराए।
तिन भी परम पुरख नही पाए।
जे कोई होत भयो जाग सिआना।
तिन तिन अपनो पंथु चलाना ॥14॥

परम पुरख किनहूं नह पायो।
बैर बाद हुकार बढ़ायो।
पेड पात आपन ते जलै।
प्रभ कै पंथ न कोऊ चलै ॥15॥

जिनि जिनि तनकि सिद्ध को पायो।
तिन तिन अपना राहु चलायो।
परमेशर न किनहू पहिचाना।
मम उचारते भयोदिवाना ।।16।।

परम तत्त किनहू न पछाना।
आप आप भीतरि उरझाना।
तब जे जे रिखराज बनाए।
तिन आपन पुनि सिंम्रिति चलाए ।।17।।

जे सिंम्रितन के भए अनुरागी।
तिन तिन क्रिआ ब्रहम की त्यागी।
जिन मनु हरि चरनन ठहरायो।
सो सिंम्रितन के राह न आयो ।।18।।

ब्रह्मा चार ही वेद बनाए।
सरब लोक तिह करम चलाए।
जिनकी लिव हरि चरनन लागी।
ते बदन ते भए तिआगी ।।19।।
जिन मत बेद कतेबन त्यागी।
पारब्रह्म के भए अनुरागी।
तिन के गूड़ु मत्त जे चलही।
भाँति अनेक दुखन सो दलही ।।20।।

जे जे सहित जातन संदेह।
प्रभ को संगि न छोड़त नेह।
ते ते परमपुरी कह जाही।
तिन हरि सिउ अंतरु कछु नाही ।।21।।

जे जे जीप जातन ते डरे।
परम पुरख तजि तिन मग परे।
ते ते नरक कुंड मो परही।
बार बार जग मो बपु धरही ।।22।।

तब हरि बहुरि दत्त उपजाइयो।
तिन भी अपना पुथु चलाइयो।
कर मो नख सिर जटा सवारी।
प्रभ को क्रिआ कछू न बिचारी ।।23।।

पुनि हरि गोरख कौ उपराजा।
सिक्ख करे तिनहू बड़ राजा।

स्त्रवन फारि मुद्रा दुऐ डारी।
हरि की प्रीति रीति न बिचारी ॥24

पुनि हरि रामानंद को करा।
भेस बैरागी को जिन धरा।
कंठी कंठि काठ की डारी।
प्रभ की क्रिआ न कछू बिचारी ॥25

जे प्रभ परम पुरख उपजाए।
तिन तिन अपने राह चलाए।
महादीन तबि प्रभ उपराजा।
अरब देस को कीनो राजा ॥26

तिन भी एकु पंथ उपराजा।
लिंग बिना कीने सभ राजा।
सभ ते अपना नामु जपायो।
सतिनामु काहू न द्रिड़ायो ॥27

सभ अपनी अपनी उरझाना।
पारब्रह्म काहू न पछाना।
तप साधत हरि मोहि बुलायो।
इम कहिकै इह लोक पठायो ॥28

अकाल पुरख बाच ।।चौपाई।।
मैं अपना सुत तोहि निवाजा।
पंथ प्रचुर करबे कह साजा।
जाति तहां तै धरमु चलाइ।
कबुधि करन ते लोक हटाइ ॥29

।।दोहरा।।

ठाढ भयो मैं जोरि करि बचन कहा सिर न्याइ।
पंथ चलै तब जगत मैं जब तुम करहु सहाइ ॥30

।। चौपाई ।।

इह कारनि प्रभ मोहि पठायो।
तब मैं जगत जनमु धरि आयो।
जिम तिन कही इनै तिम कहिहौ।
अउर किसू ते बैर न गहिहौ ॥31

जे हम को परमेशर उचरिहै।
ते सभी नरकि कुंड महि परिहै।

मां को दासु तवन का जानो।
या मैं भेदु न रंच पछानो ||32||

मैं हो परम पुरख का दासा।
देखनि आयो जगत तमासा।
जो प्रभ जगति कहा सो कहिहौ।
म्रित लोग ते मोनि न रहिहौ ||33||

ज छंद।।

कहियो प्रभू सु भाखिहौ।
किसू न कान राखिहौ।
किसू न भेख भोज हौ।
अलेख बीज बीज हौ ||34||

पखाण पूज हौ नहीं।
न भेख भीज हौ कही।
अनंत नामु गाइहौ।
परम्म पुरख पाइहौ ||35||

जटा न सीस धारिहो।
न मुंद्रका सु धारिहो।
न कान काहू की धरो।
कहियो प्रभू सु मैं करो ||36||

भजो सु एकु नागयं।
सु काम साब ठामयं।
न जाप आन को जपो।
न अउर थापना थपो ||37||

बिअंति नाम ध्याइहो।
परम जोति पाइहो।
न ध्यान आन को धरो।
न नाम आन उचरौ ||38||

तवक्क नाम रत्तियं।
न आन मान मत्तियं।
परम्भ ध्यान धारियं।
अनंत पाप टारियं ||39||

तुमेव रुप राचियं।
न आन दान माचियं।

तवक्क नामु उचारियं।
अनंत दूख टारियं ।।40।।

।। चौपाई ।।

जिन जिन नामु तिहारो ध्याइआ।
दूख पाप तिन निकटि न आइया।
जे जे अउर ध्यान को धरही।
बहिस बहिस बादन ते मरही ।।41।।

हम इह काज जगत मो आए।
धरम हेतु गुरदेव पठाए।
जहां तहां तुम धरम बिथारो।
दुसट दोखियनि पकरि पछारो ।।42।।
याही काज धरा हम जनमं।
समझ लेहु साधू सभ मनमं।
धरम चलावन संत उबारन।
दुशट सभन को मूल उपारन ।।43।।
जे जे भए पहिल अवतारा।
आपु आपु तिन जापु उचारा।
प्रभ दोखी कोई न बिदारा।
धरम करम को काहु न डारा ।।44।।
जेजे गउस अंबीआ भए।
मै मै करत जगत ते गए।
महापुरुख काहू न पछाना।
करम धरम को कछू न जाना ।।45।।
अवरन की आसा किछु नाही।
एकै आस धरो मन माही।
आन आस उपजत किछु नाही।
वा की आस धरो मन माही ।।46।।

।। दोहरा ।।

कोई पड़त कुरान को कोई पड़त पुरान।
काल न सकत बचाइकै फोकट धरम निदान ।।47।।

।। चौपाई ।।

कई कोटि मिलि पढ़त कुराना।
बाचत किते पुरान अजाना।

अंति काल कोई काम न आवा।
दाव काल काहू न बचावा ॥48॥

किउ न जपो तो को तुम भाई।
अंति काल जो होइ सहाई।
फोकट धरम लखो कर भरमा।
इन ते सरत न कोई करमा ॥49॥

इह कारनि प्रभ हमै बनायो।
भेदु भाखि इह लोक पठायो।
जो तिन कहा सु सभन उचरौ।
डिंभ विंभ कछु नैक न करौ ॥50॥

॥ रसावल छंद ॥

न जटा मुंड धारौ।
न मुंद्रका सवारौ।
जपो तास नामं।
सरै सरब कामं ॥51॥

न नैनं मिचाऊं
न डिंभं दिखाऊं
न कुकरमं कमाऊं
न भेखी कहाऊं ॥52॥

॥ चौपाई ॥

जे जे भेख सु तन मैं धारै।
ते प्रभ जन कछु कै न बिचारै।
समझ लेहु सभ जन मन माही।
डिंभन मै परमेशरु नाहीं ॥53॥

जे जे करम करि डिंभ दिखाई।
तिन परलोगन मो गति नाहीं।
जीवत चलत जगत के काजा।
स्वाँग देखि करि पूजत राजा ॥54॥

स्वाँगन मै परमेशरु नाही।
खोजि फिरै सभ ही को काही।
आपनो मनु कर मो जिह जाना।
पारब्रह्म को तिनी पछाना ॥55॥

।। दोहरा ।।

भेख दिखाए जगत को लोगन को बसि कीन।
अंत कालि काती कट्यो बासु नरक मो लीन ।।56।।

।। चौपाई ।।

जे जे जग को डिंभ दिखावे।
लोगन मूंडि अधिक सुखु पावे।
नामा मूंद करै परणामं।
फोकट धरम न कउडी कामं ।।57।।

फोकट धरम जिते जग करही।
नरकिकुडं भीतर ते परही।
हाथि हलाए सुरग न जाहू।
जो मनु जीत सका नहि काहू ।।58।।

।। कबि बाच ।।

।। दोहरा ।।

जो निज प्रभ मो सो कहा सो कहिहौ जग माहि।
जो तिह प्रभ कौ ध्याइ हैं अंत सुरग को जाहि ।।59।।

।। दोहरा ।।

हरि हरि जन दुइ एक हैं बिब विचार कछु नाहि।
जल ते उपज तरंग जिउ जल ही बिखै समाहि ।।60।।

।। चौपाई ।।

जे जे बादि करत हंकारा।
तिन ते भिंन्न रहत करतारा।
बेद कतेब बिखै हरि नाही।
जानि लेहु हरि जन मन माही ।।61।।

आंख मूदि कोऊ डिंभ दिखावै।
आंधर की पदवी कह पावै।
आंखि मीच मग सूझ न जाई।
ताहि अनंत मिलै किम भाई ।।62।।

बहु बिसथार कह लउ कोई कहै।
समझत बाति थकति हुऐ रहै।
रसना धरै कई जौ कोटा।
तदपि गनत तिह परत सु तोटा ।।63।।

॥ दोहरा ॥

जब आइसु प्रभ को भयो जनमु धरा जग आइ।
अब मै कथा संछेपते सभहू कहत सुनाइ ॥64॥

॥ इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे आगिआ काल जग प्रवेश करने नाम खशटमो धिआइ समापतम सतम सुभम सतु ॥6॥ अफजू ॥279॥

श्री विचित्र नाटक

छठवां अध्याय

1- गुरु गोविन्द सिंह जी छठे अध्याय में अपने पूर्व जन्म की कथा का वर्णन करते हैं और कहते हैं कि अब मैं अपने पूर्व जन्म का बखान करता हूं जब मैं हेम कुण्ड पर्वत जहाँ सात हिम से ढकी चोटियाँ हैं। वहां चिरकाल से तप करता रहा था जब मुझे इस लोक में आने का आदेश हुआ।

2- वह स्थान जिसे सप्त सिंध के नाम से जाना जाता है। उसकी स्थान पर राजा पण्डू (पांडवों के पिता, कुन्ति के पति) ने भी तप किया था। वहीं मैंने भी महाकाल से उपजी कालिका की आराधना की।

3- इस विधि से तप करते-करते मुझे अद्वायत का साक्षात्कार हुआ बूंद ने सागर को पा लिया कलयुग में होने वाले मेरे माता-पिता ने प्रभू की आराधना की तथा कई प्रकार के तीर्थ किये, जप किये।

4- उन्होंने जो कर्ता का चिन्तन किया तो प्रभू ने उनकी मनोकामना पूर्ण की उसी प्रभू ने मुझे भी आज्ञा दी कि मैं अब तप त्याग कलयुग के इस घोर समय में जन्म लूं।

5- इतनी साधना के बाद जब लहर फिर से सागर में मिली हो तो फिर से बाहर आने की इच्छा नहीं होती। मेरा मन प्रभू से अलग होने का नहीं हो रहा था उसी महासागर की गहराइयों में ही गुम रहना चाहता था पर प्रभू जी जैसे जैसे आपने हमको समझाया, ज्ञान दिया आपके आदेश से लोक कार्य हेतु मुझे भेजा गया।

6- अपने आप को एक कीट मात्र कहने वाले गुरु गोविन्द सिंह आगे लिखते हैं कि प्रभू की आवाज जैसे मेरी रग-रग में गूंज रही हो। मुझे बताया जा रहा हो मेरी अन्तरआत्मा मुझे कलयुग में भेजने के लिये प्रेरित कर रही थी। सर्वप्रथम इस सृष्टि की रचना मेरी इच्छा मात्र से बनी यहा कुछ समस्याएं खड़ी हो गई उनके समाधान हेतु मैनें बलशाली दैत्य भी दानवों की सहायता हेतु बना दिये। वह सुख देने के स्थान पर अपने बल को स्वार्थ पूर्ती में लगाने लगे।

7- मैंने लीला रची दैत्यों को शोधने के लिये देवता गणों का निर्माण हो गया। परन्तु देवताओं ने इसे प्रभू की कृपा नहीं समझी बल्कि बूंद ने स्वयं को ही सागर समझ लिया वह समझे कि हम ही भगवान हैं जिन्होंने ऐसे योद्धा दैत्यों को मारा है। तब मैनें (प्रभूने) अष्ट गुणों में रुप धारण किया कि इन सब को सूझ मिले।

8- देव स्वयं ही परिपूर्ण महादेव बनने लगे अपने को विष्णु भी समझा और ब्रह्मा के साथ जोड़ा अपने को त्रिमूर्ती के रुप में रख स्वयं ही भगवान का रुप बन गये उस देवों के महादेव को पहचान न सके जो सब देवों का देव है।

9- पृथ्वी, ध्रुव, चन्द्र, सूय, अग्नि, पवन, प्रभा तथा प्रतघूश का सृजन हो गया। यह भाप की भांति सारी पृथ्वी पर फैला दिये गये। अपने को ऊपर उड़ता देखा

तो बादल ने अपने को ही सागर मान लिया उन्होंने सोचा कि हम वहीं से हैं पर वह नहीं बने यही सोचा कि हमारे बिना क्या कोई और ठाकुर हो सकता है।

10- पृथ्वी पर भेजे लोग भी पर्म तत उस सति को जो सर्वत्र है तथा सर्वग्य है उस को नहीं पहचान सके जिसने प्रभाव डाला उसी के दास हो गये कितनों ने केवल सूर्य तथा चन्द्र को ही प्रभू समझा। कई अग्नि के होत्र बन अग्नि पूजक बन गये। जो व्यक्ति प्रभू को ।परम तत्व (पर्मतत्व)-(सति स्वरुप) को नहीं पहचान पाये वह उन्हीं साक्ष्यों को ही ईश्वर समझ बैठे कितने तो सूर्य अथवा चन्द्र को ईश्वर कहने लगे।

11- कुछ ऐसे भी थे जो केवल पाहन को ही प्रभू समझने लगे और वह भी विशिष्ट प्रकार का पाहन अन्य किसी में नहीं। कुछ ने नदियों में स्नान को ही ईश्वर के मिलन का विधान समझ लिया। कितनों ने केवल कर्मकाण्ड मात्र ही अपना ल'क्ष्य बना लिया और धर्मराज को ईश्वर का रुप जान देव पूजन में पड़ गये।

12- सदा स्मरण रखने की बात है कि किस प्रकार से स्वार्थ अहंकार को और अहंकार विनाश को प्रेरित करता है। वह ग्रह और देव आदि जन साधारण की सेवा का कार्य लेकर आये थे वह अपना कर्तव्य भूल गये और बजाय प्रभू के गुणगान करने के स्वयं अपना ही बखान करने लगे।

13- जिन मनुष्यों को अधिकृत किया गया कि वह संसार के हर मनुष्य को बराबर समझ कर उसकी सेवा करेगा वह भी शीघ्र अपने को महान, श्रेष्ठ यहां तक कि ईश्वर कहलवाने लगे वह भी ममता में फंस भगवान को एक पाहन मात्र बता कर उसकी पूजा अर्चना और उसके नाम पर अपनी स्वार्थ पूर्ती का काम मध्यस्थ बन करने लगे।

14- उनके अन्दर फिर सिद्धों ने जन्म लिया और उन्होंने इन्द्रियों पर विजय पाई परंतु विजय पाते ही वे अहंकार और अभिमान का शिकार हो प्रभू को भूल गये। प्रभू के बनाये संसार को ही झूठा कहने लगे। उनमें से कुछ ऐसे बुद्धिमान भी निकले जिन्होंने व्यक्ति पूजा करा महंत बन अपना ही पंथ चला लिया और इन नये-नये पंथों द्वारा समाज को स्वतंत्र करने के स्थान पर विघटन की ओर ले गये।

15- परम पुरुष जो सबका कारण भी है और कर्ता भी उसको भूल गये परिणाम हुआ वेमनस्य, स्वार्थ, अहंकार तथा शत्रुता की भावना को बढ़ावा मिला जैसे जंगल में वृक्ष की शाखायें और पत्ते परस्पर टकराकर आग उत्पन्न कर देते हैं और दावानल पैदा हो जाती है। उसी प्रकार से ये स्वार्थी पंथ आपस में एक दूसरे से टकरा कर समाज रुपी उपवन को भस्म करने लगे प्रभू का प्रेम भरा मार्ग भूल गये।

16- जिस व्यक्ति ने तनिक भी सिद्धि और ज्ञान को प्राप्त कर लिया उसको लगा कि वह बड़ा बुद्धिमान है और वास्तव में वही परमेश्वर भी है अतः कुछ लोगों को शिष्य बना कर अपना ही पंथ चला दिया और नीम-हकीमों की भाँति दीवानों की तरह अपना ही गान करने लगे।

17– परम तत्व अर्थात् ईश्वर का सर्वत्र और सर्वग्य होना भूल कर अपने ही में लघु मात्र कुयें के मेंढक के समान हो गये तब जिन–जिन ऋषियों को बुद्धि और ज्ञान मिला था कि वे वेद की वाणी का प्रचार और प्रसार करते, उन्होंने अपने ही नाम की स्तुति करवा कर वेद वाणी के विपरीत पंथ बना दिये।

18– जिन–जिन लोगों ने इन स्तुतियों को प्रभू समझकर मात्र पाठ ही किया और ब्रह्म की वास्तविक क्रिया को त्याग दिया वे मार्ग से हट गये और जिन्होंने ब्रह्म की क्रिया को जीवन में धारण कर लिया वे स्तुतियों से हट गये परंतु प्रभू चरणों में लग गये।

19– ब्रह्मा ने चार वेद बनाये थे परंतु जो वेद के बाद में ही अपना समय नष्ट करने लगे वे वेद मार्ग से हट गये उसके विपरीत वेद के मार्ग पर चलने वालों ने हरि चरणों में चित्त लगा लिया और वेदों को त्याग दिया।

20– जिन्होंने अपनी बुद्धि को भगवान के साथ एक मय कर लिया उनको न वेद की आवश्यकता पड़ी न कुरान की। उनके हर प्रकार के दुख स्वतः नष्ट हो गये और ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित हो गये।

21– जो–जो भी प्रभू पर संदेह रहित विश्वास करते हैं तथा हर उस परीक्षा में, जो भगवान विश्वास के लिये सामने आये, उत्तीर्ण होते हैं वे सब परमपुरी में जावेंगे। वैसे व्यक्तियों में और प्रभू में भेद नहीं।

22– जो जीव वास्तविकता से डरे, ईश्वरीय धर्म को छोड़कर जरा से मौत के डर के कारण परकियों के चरणों में जा गिरे वह बार–बार जन्म लेकर घोर नर्क में सड़ते रहेंगे।

23– ईश्वर की लीला से दत्त प्रकट हुए उन्होंने भी अपना निजी पंथ बना लिया, ऊंगलियों के नाखून लम्बे कर लिये, सिर पर जटायें सजा लीं। उन्हें लगा कि भगवान को इससे पा लेंगे। प्रभू की उत्पन्न की हुई लीला को भी भूल गये।

24– गुरु जी लिखते हैं कि तत्पश्चात् गुरु गोरखनाथ का भी अवतरण हुआ इस आशय से कि सारे देश को शिवशंकर की तरह शस्त्र धारी और शक्तिशाली बना देंगे, उनके अनुयायियों ने कान फाड़कर बुन्दे डाल लिये घर छोड़कर जंगल में चले गये, गृहस्थ त्याग दिया और भिक्षा ही जीवन का साधन बना कर प्रभू द्वारा निर्मित जगत को भी "मिथ्या" की संज्ञा दी।

25– फिर रामानन्द जी का अवतरण हुआ उनके अनुयायियों ने गले में काठ की माला डाली और वैरागी बन गये, मन से बैराग नहीं लिया केवल ढोंग मात्र रच लिया और सत्य के मार्ग को भूल गये।

26– विडम्बना है कि जो–जो भी महापुरुष प्रभू लीला के अनुसार अवतरित हुए उन्होंने अपने–अपने पंथ और गद्दी चलाई प्रभू का मार्ग छोड़ दिया।

27– न केवल भारत में परन्तु अरब के मरुस्थल में भी मोहम्मद नाम से भगवान की

लीला द्वारा मार्ग दर्शक बना। भगवान की कृपा से उनको पैगम्बर की पदवी मिली। परन्तु उन्होंने भी यहूदी और ईसाइयों के साथ-साथ अपना संप्रदाय खड़ा कर सारी दुनिया के राज्य का स्वामी होने की घोषणा की।

28- पैगम्बर ने भी अपना नाम ही सारी दुनिया में विख्यात किया उस सर्वव्यापी प्रभू का जो घट-धट में परिपूर्ण है ध्यान छोड़कर एक दिशा में संकेत किया।

29- उस समय जब मैं (पूर्व जन्म के गुरु गोविन्द सिंह) हेमकुण्ड पर्वत पर तप में लीन था तब एक गूंज उठी भगवान का आदेश सुनाई दिया।

30- उसमें आकाशवाणी हो रही थी "मेरे प्रिय पुत्र मैं तुम्हें समाज में कार्य करने के लिये अधिकृत करता हूं। तुम मेरे ही पंथ को शक्तिशाली बना कर उसका प्रचार करना (प्रचुर,अब्नडन) तुम उसको दृढ़ करने के लिये अधिकृत हो, तुम पर दायित्व है कि तुम भारत में मानव धर्म का प्रचार करना और लोगों को कुबुद्धि के मार्ग से हटाना" ।

31- ऐसी ध्वनि सुनते ही मैं हाथ जोडकर खड़ा हो गया और सिर झुका कर प्रार्थना की कि "मैं आपके आदेश का अक्षरशः पालन करुगा। सारे जगत में आपके पंथ का प्रसार करुगा परन्तु करवाने वाले आप हैं मैं तो निमित्त मात्र हूं। आप ही हर समय सहाई हों ये ही मेरी प्रार्थना है।

32- ये ही लक्ष्य था जिसके लिये प्रभू ने मुझे प्रेरित किया और इसकी पूर्ति हेतु मैं पुनः जन्म लेकर मातृ लोक में आया मैंने वहीं किया जो प्रभू का आदेश हुआ। वांहे गुरु के आदेश का पालन करता हुआ मैं जूझ रहा हूं धर्म को प्रचुर करने के लिये। मेरा किसी से निजी विरोध नहीं, न ही शत्रुता।

33- अतः मैं उस परम पुरुष का दास हूं, निमित्त मात्र हूं। यह मैं केवल संकोच वश नहीं कर रहा न ही इसमें कोई औपचारिकता है ये वास्तविकता है। मेरी इस बात में तनिक भी शक करने की गुंजाइश नहीं। मुझे जो ईश्वर कहे अथवा समझेगा वह निश्चय ही नर्ककुण्ड में जायेगा।

34- मैं तो उस परम पुरुष प्रभू का दास मात्र हूं, उसकी प्रेरणा से प्रेरित हो, उसकी लीला का अंग हूं, वह स्वयं ही करता है, कारणहार है, मैं केवल उसकी आज्ञा का अनुसरण करने वाला मात्र तमाशाई हूं।

35- जैसे मुझे प्रेरणा मिली है उनका शब्दों में बखान कर रहा हूं और इसमें मुझे कोई विशेष वेश-भूषा अथवा आडम्बर करने की आवश्यकता नहीं। कोई मंत्र-तंत्र भी करने की आवश्यकता नहीं मैं तो उसी अलख निरंजन के बीच मंत्र को ही हर जगह संजो दूंगा।

36- जो पर्वत का स्वामी हो वह पाषान को क्यों पूजेगा, जिसका रुप उस सत्य के रुप से मिलकर एक हो गया है वह भेष क्यों बदलेगा। वो अनन्त नाम से उसे जानता है परम पुरुष उसके साथ है उसी का उसको आश्रय है।

37- उसके सिर पर जटा होना आवश्यक नहीं है न ही मुद्रिका सजाने की आवश्यकता

है, मुझे अपने कान में मंत्र फुकवाने की भी क्या आवश्यकता है। मैं तो प्रभू जो करायेगा वहीं करुगा।

38– मुझे एक सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी प्रभू का ही आश्रय है। किसी और के जाप को जप कर अथवा कोई पंथ सजा कर मुझे क्या लेना–देना है।

39– उस प्रभू का, जिसका कोई अंत नहीं, सदा ध्यान करुगा उसी से मुझे प्रकाश प्राप्त होगा और मार्ग दर्शन मिलेगा।

40– हे प्रभू मैं तेरे ही नाम में रंगा हू। मुझे पथ भ्रष्ट मत होने देना। मैं जन्म भर तुम्हारे परम ध्यान में मगन रहूं और सन्मार्ग पर चलूं।

41– मुझे तुम्हारा रुप (जिसका कोई रुप नहीं) वही भाता है वही प्रकाश है वही जान है उसी से मेरे सामने कोई कष्ट आने का साहस नहीं। तेरे अतिरिक्त मुझे किसी अन्य सहारे की आवश्यकता नहीं।

42– क्योंकि मुझे स्पष्ट हो गया है कि तेरी शरण जो–जो आया वह हर कष्ट से मुक्त हो गया। जिसने तुम्हें छोड़कर किसी दूसरे का आसरा लिया, भेद–भाव एवं मोह जाल में फंस दुखी ही हुआ।

43– गुरु जी जन साधारण को संबोधित करते हुए लिखते हैं कि मेरा उत्तरदायित्व धर्म की रक्षा करना है (जो कलयुग में कभी नानक के रुप में, कभी गुरु अर्जुन के रुप में और कभी गुरु तेग बहादुर के रुप में हुआ) मैं इस पथ पर चलते हुए इस कार्य का जगह–जगह धर्म का प्रचार करु, दुष्टों का शोध करु मैं विजयी होऊं।

44– जैसा पहले भी वर्णन किया है जो पहले कुछ अवतार हुए लोगों ने उन्हें ही पूजा। जिस मार्ग की अवतार चर्चा करते थे उसको त्याग दिया। जिस परम पुरुष ने उनको अवतरित किया था उसको भूल गये और व्यक्ति पूजा में लग गये।

45– हजरत आदम इब्राहिम से आदि तथा बाद में जितने भी पैगम्बर हुए वे बार–बार अपनी ही बात कहते रहे, अपना ही पूजन करवाते रहे। सर्वशक्ति मान सर्वत्र प्रभू जो सबमें है उसकी पहचान न करवा सके न तो किसी कर्म से और न धर्म से ही।

46– मेरे मित्रों भगवान के अतिरक्त किसी दूसरे की आशा अपने मन से हटा दो। ये समझ लो कि वही ईश्वर और प्रभू सब करता भी है कारण भी है।

47– अगर तुम कहो कि तुम कुरान पढ़कर मौत के मूंह में जाने से बच जाओगे या तुमको कोई ऐसा कहे तो मान लेना कि कोई तुमको मूर्ख बना रहा है और तुम मूर्ख बन रहे हो।

48– तुमको बहुत कहेंगे कि तुम ये धर्म पुस्तक पढ़ लो, अमर हो जावोगे। परन्तु ये वास्तविकता से बहुत दूर की बात है कोई किताब तुमको नहीं बचा सकेगी काल से आज तक कोई नहीं बचा।

49– जिनके अनुष्ठान अथवा रटन मात्र करने से जिस मृत्यु के भय से प्रभावित हो, ये कर रहे हो तो मैं तुम्हें आगाह कर दूं कि तुम भ्रमित हो ऐसी आशा को रख

कर तुम क्यों समय नष्ट करते हो। मृत्यु के भय से मुक्त होकर क्यों नहीं उस प्रभू का ध्यान करते जो जन्म और मृत्यु का स्वामी है, प्रकाश का अधिष्ठाता है।

50- मैं इस सच्चाई को जगत भर में कहूंगा। मुझे प्रभू से ये ही प्रेरणा मिली है, उसी ने मुझे ज्ञान और साहस दिया है कि मैं प्रचलित पाखण्ड का खण्डन करु।

51- इसलिए मैं अपने मूं ड पर जटा नहीं बढ़ा रहा हूं न ही मुद्रिका सजा रहा हूं केवल उस प्रभू का गान कर रहा हूं जो मेरा मार्ग दर्शक है।

52- और न ही मैं कान और आंखे बन्द कर अजान देता हूं। न ही ऐसे कुकर्म करता हूं जिसका छुटकारा कर्मकाण्ड के हाथ हो।

53- ऐ मेरे भाइयों तुम अच्छी तरह इस विषय को समझ लो जो प्रभू जन ईश्वर पर निर्भर हैं उन्हें किसी विशेष भेष की आवश्यकता नहीं। प्रभू को कोई विशेष वेश-भूषा ही स्वीकार है, ऐसा कहना और समझना धोखा है।

54- वो जो आज की सत्ता को खुश करने में लगे हैं और सत्ताधारियों की नकल करते हैं। हो सकता है कि वो उनके दरबार में प्रसन्न दिखाई दें परन्तु ये ठगी परमात्मा के द्वार में नहीं चल सकती। वे परलोक में कभी सुखी नहीं रहेंगे।

55- कोई तो ऐसे भी हैं जो अपने को प्रभावी दिखाने के लिये अपनी पूरा कराने के लिये कई प्रकार के स्वांग करते हैं। अपने को परमेश्वर कहलाते हैं। सत्य ये है कि न तो परमेश्वर को स्वांग ही करने हैं न उसे स्वांग पसन्द हैं, इसका तुम विश्वास रखो।

56- जो स्वांग दिखा कर भोले-भाले लोगों को प्रभावित कर लेते हैं, वे स्वांगी हैं खुद तो नर्कमें जावेंगे ही अपने अनुयायियों को भी ले जायेंगे।

57- ऐसे स्वांगी सम्भवतः कुछ देर के लिए अपने ढोंग का प्रभाव दिखा कर भोले-भाले लोगों को लूट, बड़े प्रसन्न हों परन्तु अंत में उनकी पोल खुल ही जाती है। अतः उनके द्वारा आंख नाक बंद करने का ढोंग भी तुम्हें ईश्वर के साथ नहीं जोड़ सकता।

58- जो मन को शुद्ध नहीं कर सकता उसने शुद्ध मंत्र का उच्चारण कर भी लिया तो क्या उससे प्रभू का साक्षात्कार होगा। ऐसे फोकट कर्म तो नर्कमें ही लें जायेंगे।

59- ये वास्तविकता है जो प्रभू का चिन्तन करेगा वो प्रभू को ही प्राप्त होगा। ये आदेश प्रभू का ही है (गीता का अध्ययन करें) उसकी कही बात मैं आपको कह रहा हूं।

60- हरि और हरिजन एक ही हैं। जैसे जल से उठी तरंग अर्थात् लहर, जो पानी से उठती है परन्तु वह पानी से अलग नहीं। इसी प्रकार से हरि और हरिजन इसमें रंच मात्र भी सन्देह मत करना।

61- जिन प्राणियों को अहंकार के कारण स्मृति विभ्रमित हो गई है, उनकी बुद्धि का नाश होगा ही। वे ग्रंथों को वेदों को और अल्ला द्वारा उतारी गई किताबों को ही भगवान समझ बैठते हैं कोई भी ग्रंथ परमेश्वर नहीं है। मेरे भाइयों इस बात को अच्छी तरह पल्लू में बाँध लो।

62– ऐसे भी हैं जो जन साधारण में बैठ कर उन्हें आमन्त्रित कर आँखे बंद कर भक्ति का अभिनय करते हैं। मानों समाधि में बैठे हैं तो भाई अगर तुम्हें आँखे बंद करके ही ध्यान करना था तो हमें क्यों बुलाया। सिवाय इसके कि तुम हमें प्रभावित करना चाहते थे। परन्तु हम तो तुमको नेत्रहीन ही समझेंगे, जो प्रभू के बनाये संसार से और उसकी लीला से आँखे मोड़ लेता है वह हमें ईश्वर से मिलन का मार्ग कैसे बतायेगा।

63– रचना तो एक है। प्रभू के गुण और नाम अनन्त। कोटि–कोटि नाम कोटि–कोटि बार लेने पर भी ये जिव्ह् तेरे गुणों का गान नहीं कर सकती। इसलिए विस्तार को छोड़ कर एक ही बात जानता हूं कि तू अनन्त है।

हां तो जैसा मैंने कहा प्रभू की आज्ञा से मेरा जन्म हुआ। अतः मैं जन्म कथा और आने वाली घटनाओं का वर्णन आगे के अध्याय में करुगा।

इति श्री विचित्र नाटके ग्रंथे षष्टम अध्याय समाप्तम–अस्तु

श्री विचित्र नाटक
सातवाँ अध्याय
अथ कबि जनम कथनं

।। चौपाई ।।

गुर पित पूरब कियसि पयाना।
भाँति भाँति के तीरथि नाना।
जब ही जात त्रिवेणी भए।
पुंन दान दिन करत बितए ।।1।।
तहीं प्रकाश हमारा भयो।
पटना शहरि बिखै भव लयो।
मद्र देस हमको ले आये।
भाँति-भाँति दाईअन दुलराए ।।2।।
कीनी अनिक भाँति तन रच्छा।
दीनी भाँति भाँति की सिच्छा।
जब हम धरम करम मो आए।
देव लोक तब पिता सिधाए ।।3।।

।।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे नाम सपतमो धिआइ समापतम सतम सुभम सतु ।।7।। अफजू ।।282।।

श्री विचित्र नाटक
सातवाँ अध्याय

1– मेरे पिता गुरु तेग बहादुर ने पूरब दिशा का प्रवास प्रारम्भ किया। मार्ग में अनेक तीर्थों पर रुके और पवित्र नदियों, में (गंगा, यमुना, गोमती, सरयू, सरस्वती (त्रिवेणी) गोदावरी) स्नान किया। पुरातन तीर्थों के दर्शन किये। कई दिन तक प्रयाग में रहे। अन्य तीर्थों पर पुण्य दान करते हुए समय का उपयोग करने लगे।

2– मेरी माता गुजरी वहीं गर्भवती हुईं। वहाँ से वे लोग काशी गये। कुछ दिन वहाँ रुकने के बाद गुरु जी का काफिला पटना नगर में पहुंचा। मेरी माता जी को छोड़ कर वे स्वयं आगे के प्रवास में चले गये। मेरा जन्म उसी पटना नगरी में हुआ। पिता जी लौट कर पंजाब चले गये थे। वहां से जब उनकी आज्ञा आई तो हम भी पंजाब आ गये।

3– जहाँ मुझे अनेक प्रकार का रक्षा–प्रतिरक्षा का ज्ञान दिया गया। भिन्न–भिन्न प्रकार की शिक्षा से मुझे अवगत कराया गया, जिससे मैं आगामी कार्य को संभाल सकूं और जब मैं धर्म का कर्म करने योग्य हो गया तो पिता जी देव लोक (शहीद हो गये) चले गये।

इति श्री सप्तम अध्याय समाप्त शुभम अस्तु
अफजू ।प्रगति क्रम।।7।। 282।

श्री विचित्र नाटक

आठवाँ अध्याय

अथ राज साज कथनं

।। चौपाई ।।

राज साज हम पर जब आयो।
जथाशकत तब धरम चलायो।
भाँति-भाँति बन खेल शिकारा।
मारे रीछ रोझ झंखारा ।।1।।

देस चाल हम ते पुनि भई।
शहिर पावटा की सुधि लई।
कालिंद्री तटि करि बिलासा।
अनिक भांत के पेखि तमासा ।।2।।

तह के सिंध घने चुनि मारे।
रीछ रीछ बहु भाँति बिदारे।
फतेशाह कोपा तबि राजा।
लोह परा हम सों बिनु काजा ।।3।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

तहा शाह श्री शाह संग्राम कोपे।
पंचो बीर बंके प्रिथी पाई रोपे।
हठी जीत मल्ल् सु गाजी गुलाबं।
रणं दिखीऐ रंग रुपं सहाबं ।।4।।

हठियो माहरी चंदयं गंगरायं।
जिनै कित्तीयं जित्तीयं फौज तामं।
कुपे लालचंदं कीए लाल रुपं।
जिनै गंजीयं गरब सिंघं अनूपं ।।5।।

कुपिओ माहरु काहरु रुप धारे।
जिनै खांन खावीनीयं खेत मारे।
कुपिओ देवतेशं दयाराम जुद्धं।
कोयो द्रोण की महां जुद्ध सुद्धं ।।6।।

क्रिपाल कोपीयं कुतको संभारी।
हठी खानहयात के सीस झारी।

उठी छिच्छि इच्छं कढ़ा मेझ जोरं।
मनो माखनं मट्टकी कान्ह फोरं ॥7॥

तहां नंदचंदं कीयो कोपु भारी।
लगाई बरच्छी क्रिपाण संभारो।
तुटी तेग त्रिक्खो कढे जम्म दड्ढं।
हठी राखीयं लज्ज बंसं सनड्ढं ॥8॥

तहाँ मातलेयं क्रिपालं करुद्धं।
छकियो छोभ छत्री कर्‌यो जुद्ध सुद्धं।
सहे देह आपं महाबीर बाणं।
करी खान बानीन खाली पलाणं ॥9॥

हठियो साहबं चंद खेतं खत्रियाणं।
हने खान खूनी खुरासन भांनं।
तहाँ बीर बंके भली भाँति मारे।
बचे प्रान लै कै सिपाही सिधारे ॥10॥

तहाँ शाह संग्राम कोने अखारे।
घने खेत मो खान खूनी लतारे।
न्रिपं गोपलायं खरो खेत गाजै।
म्रिगा झुंड मदध्य मनो सिंध राजै ॥11॥

तहाँ एक बीरं हरीचंद कोप्यो।
भली भाँति सो खेत मो पाव रोप्यो।
महाँ क्रोध कै तीर तीखे प्रहारे।
लगै जौनि के ताहि पारै पधारे ॥12॥

॥ रसावल छंद ॥

हरी चंद क्रुद्धं।
हने सूर सद्धं।
भले बाण बाहे।
बड़े सैन गाहे ॥13॥

रसं रुद्र राचे।
महाँ लोह माचे।
हने शसत्रधारी।
लिटे ऐंच मार्‌यो ॥14॥

तबै जीत मल्लं।
हरी चंद भल्लं।

हृदै ऐंच मार्यो।
सु खेतं अतार्यो ।।15।।

लगे बीर बाणं।
रिसियो तेजि माणं।
समुह बाण डारे।
सुवरगं सिधारे ।।16।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

खुले खान खूनी खुरासान खग्गं।
परो शसत्र धारं उठी झाल अग्गं।
भई तीर भरं कमाणं कड़क्के।
गिरे बाज ताजी लगे धीर धक्के ।।17।।

बजी भेर भुंकार धुक्के नगारे।
दुहू ओर तें बीर बंक बकारे।
करे बाहु आघात शसत्रं प्रहारं।
डकी डाकणी चॉवडी चीतकारं ।।18।।

।। दोहरा ।।

कहा लगे बरनन करौ मचियो जुद्ध अपार।
जे लुज्झे जुज्झे सभे भज्जे सूर हजार ।।19।।

।। भुजंग प्रयात छंद ।।

भजियो शाह पाहाड़ ताजी त्रिपायं।
चलियो बीरोयो तोरीया ना चलायं।
जसो डडढ्वालं मधुक्कर सु साहं।
भजे संगि लैकै सु सारी सिपाहं ।।20।।

चक्रत चौपियो चंद्र गाजी चंदेलं।
हठी हरीचंदं गहे हाथ सेलं।
करियो सुआमि धरमं महा रोस रुज्झियं।
गिरियो टूक टूक ह्वै इसो सूर जुज्झियं ।।21।।

तहाँ खान नैजाबतै आन के कै।
हनिओ शाह संग्राम को शसत्र लैकै।
किते खान बानीनहूं असत्र झारे।
सही शाह संग्राम संरगं सिधारे ।।22।।

।। दोहरा ।।

मारि नजावत खान कौ संगो जंझै जुझार।
हा हा दह लोकै भइयो सुरग लोक जैकार ।।23।।

लखे शाह संग्राम जुज्झे जुझारं ।
तवं कीट वाण कमाणं संभारं ।
हनियो क खानं खिआलं खतंगं ।
डसियों सत्रु को जानु स्यामं भुजंगं ।।24।।

।। भुजंग छंद ।।

गिरियो भूम सो बाण दूजो संभार्यो।
मुखं भीखनं खान के तान मार्यो।
भजियो खान खूनी रहियो खेत ताजी।
तजे प्राण तीजे लगे बाण बाजी ।।25।।

छुटी मूरछना हरीचंदं संभारे।
गहे बाण कामाण में ऐच मारे।
लगे अंग जाके रहे ना संभारं।
तनं त्यागते देवलोकं पधारं ।।26।।

दुय बाण खैचे इकं बार मारे।
बली बीर बाजीन ताजी बिदारे।
जिसै बान लागै रहै न संभारं।
तनं बेधिकै ताहि पारं सिधारं ।।27।।

सभै स्वाम धरमं सु बीरं संभारे।
डकी डाकणी भूत प्रेतं बकारे।
हसै बीर बैताल औ सुद्ध सिद्धं।
चवी चावडीयं उडी ग्रिद्ध ब्रिद्धं ।।28।।

हरीचंद कापे कमाणं संभारं।
प्रथम बाजीयं ताण बाणं प्रहारं।
दुतिय ताक कै तीर मो कौ चलायं।
रिखओ दईव मै कान छ्वैकै सिधायं ।।29।।

त्रितिय बाण मार्यो सु पेटी मझारं।
बिधिअं चिलकतं दुआल पारं पधारं।
चुभी विंच चरमं कछु घाइ न आयं।
कलं केवलं जान दासं बचायं ।।30।।

।। रसावल छंद।।

जबै बाण लाग्यो।
तबै रोस जाग्यो।
करं लै कमाणं।
हनं बाण ताणं ।।31।।

सभै बीर धाए।
सरोघं चलाए।
तबै ताकि बाणं।
हन्यो एक जुआणं ।।32।।

हरीचंद मारे।
सु जोधा लतारे।
सु कारोड़ रायं।
वहै काल घायं ।।33।।

रणं त्यागि भागे
सभै त्रास पागे।
भई जीत मेरी।
क्रिपा काल केरी ।।34।।

रणं जीति आए।
जयं गीत गाए।
धनंधार बरखे।
सभै सूर हरखे ।।35।।

।। दोहरा ।।

जुद्ध जीत आए जबै टिकै न तिन पुर पाव।
काहलूर मै बांधियो आन अनंदपुर गाव ।।36।।
जे जे नर तह ना भिरे दीने नगर निकार।
जे तिह ठउर भले भिरे तिनै करौ प्रतिपार ।।37।।

।। चउपई ।।

बहुत दिवस इह भाँति बिताए।
संत उबार दुशट सभ धाए।
टांग टांग करि हने निदाना।
कूकर जिमि तिन तजे पराना ।।38।।

।। इति श्री ब्चित्र नाटक ग्रंथे भंगाणी जुद्ध बरननं नाम अशटमो धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।8।। अफजू ।।320।।

श्री विचित्र नाटक

आठवाँ अध्याय

अथ राज-साज कथन्नंग

1- गुरु गोविन्द सिंह जी लिखते हैं जब गुरु तेग बहादुर जी की जीवन ज्योति प्रभु में विलीन हो गई और मुझ पर राज्य को सजानें का भार आ गया तब मैंने, जितनी मेरी शक्ति थी उसके अनुसार धर्म के कार्य को चलाने का संकल्प किया। उपरोक्त वाक्य में गुरु तेग बहादुर जी के पश्चात् प्राप्त गुरु की शब्द के स्थान पर राज्य शब्द प्रयोग किया गया है, इसका बड़ा महत्व है। गुरु जी की कविता को समझने में भूल तभी होती है जब हम उनके किसी शब्द को अपने अर्थों में ले लेते हैं। गुरु द्वारा प्रयोग किया गया कोई भी शब्द मात्र कविता के लिये लिखा गया हो, ऐसा नहीं है बल्कि उसका यथार्थ अर्थ है। इसी प्रकार जब राज साज शब्द लिखे तो इसमें उनका आशय है: साज का अर्थ है निर्माण, शोध, शानौशौकत, अद्भुत आदि अर्थात् अब उपरोक्त गुरु पद पादशाही का ऐलान हुआ था। स्वराज्य की घोषणा की गई थी। एक मर्दे कालम का चेला आज राज्य को सजाने के लिये कार्यभार संभाल रहा था। ये शब्द बड़े ही महत्व के हैं। मैंने वे सब कार्य किये जो एक राजा को करने होते हैं अतः शिकार भी खेलना सीखा तथा जंगली रीछ और बारहसिंगा आदि मारे।

2- हमने एक बार फिर आनन्दपुर से देश भ्रमण हेतु प्रवास प्रारम्भ किया और कालिन्दरी नदी के किनारे पौंटा नगर की नींव रखी। वहीं ईश्वर की भिन्न-भिन्न लीलाओं से मैं आनन्दित होता रहा।

3- वहाँ के जंगलों में चुन-चुन कर शेर का शिकार किया। एक ऐसा अवसर भी आ गया कि अचानक ही फतेहशाह (गढ़वाल के राजा) ने हमसे बिगाड़ खड़ा कर लिया और अकारण ही हमसे जूझ पड़ा। इसकी चर्चा इस पुस्तक में विस्तार से की जा चुकी है।

4- फतेहशाह को इस नियत की सूचना मिली तो मैंने भी तैयारी कर ली और संगोशा जी को सेनापति घोषित कर दिया। ।गुरु तेग बहादुर जी की बहन अर्थात गुरु गोविन्द सिंह की बुआ बीबी वीरो के पांच पुत्र अर्थात् उनके फुफेरे भाई थे, जिनके नाम सर्वश्री संगोशा, जीत मल, गुलाब राय, संगतिया तथा लाल चन्द थे। तथा अन्य चारों भाइयों ने, जिनके नाम कोष्ठक में हैं, ने भी रणभूमि में वीरता से पांव जमाये तथा समय आने पर युद्ध में जुझ पड़े।

5- यहाँ हरि चन्द "हठी" और गंगाराम, जिन्होंने कितनी ही सेनाओं में युद्ध किया और कितनी ही शत्रु सेनाओं को मार कर मांसाहारी पक्षियों को भोजन बनाया था और उसके साथ लाल चन्द, जिनका युद्ध को देख कर मुख लाल हो गया था जिन्होंने कितने ही शेरों को ध्वंस किया था, मिलकर ऐसे लड़ रहे थे कि आज शत्रुओं का पूर्ण ध्वंस हो जायेगा।

6- "हठी" क्रोध से दांत पीसता हुआ पठानों की सफों को ऐसे चीर रहा था मानों महाभारत के युद्ध में द्रोणाचार्य अथवा अवश्त्थामा। उनके साथ पुरोहित दयाराम जी भी गरज कर शत्रु पर टूटे पड रहे थे।

7- महंत कृपालदास जी भी जोश में आ गये और अपना लकड़ी का गुटका (ठंडाई घोंटने वाला डंडा) हाथ में लेकर रणभूमि में निकल पड़े, जाते ही बड़े जोर का वार हयात खां के सिर पर किया उसका सिर ऐसे फूटा और उसमें से निकलकर मज्जा ऐसे गिरी मानों भगवान कृष्ण ने गोपी के सिर पर रखे मटके को फोड़ा हो और मक्खन के गटके निकलकर छींटों की तरह बाहर गिरे हों।

8- दीवान नन्द चन्द जी क्रोधित हो, उसी तरफ बढ़े जिधर शत्रु ने अब महंत कृपाल दास को घेर लिया था। जाते ही अपने बर्छे के प्रहार प्रारम्भ किये। शत्रु के शस्त्र ने जब उनका बरछा तोड़ा तो हाथ में कृपाण और कटार का प्रयोग करते हुए नन्द चन्द जी शेर की भाँति शत्रु पर टूट पड़े आज उन्होंने सनोढ़ वंश का मस्तक ऊंचा किया था।

9- मेरे मामा कृपाल दास भी उत्साह में भर गये और क्षात्र धर्म निभाने हेतु युद्ध में जुझ पड़े। क्रूर पठानों को धरती की धूल चटाते हुए उनके तीरों ने घोड़ों को पठानों से वंचित कर दिया।

10- क्षत्रिय वीर साहब चन्द की मार इतनी जोरदार थी कि खार खुरासानी पठान त्राहि-त्राहि कर उठे। उनके सिरों को साहब चन्द ने कलम की तरह काटना प्रारम्भ किया। वही उनकी मार से बच पाये जो रण में पीठ दिखा कर भाग गये।

11- संगोशा जी ने भी रण में भाग-भाग कर पठानों पर वो वार किये कि वे तौबा-तौबा बोल उठे। दर्जनों टूबानी पठानों के अहंकारी सिर जो अकड़े हुए थे सरसों की तरह काट डाले। तभी राजा गोपाल चन्द भी रण में ऐसे हुंकारा जैसे हिरणों के झुंड में शेर गरजता है।

12- एक अन्य शूरवीर, जिसका नाम हरिचन्द था रणभूमि में आ गया। उसने तीरों की इतनी तीक्ष्ण वर्षा की कि जिसको भी तीर लगा उसके शरीर को चीरता हुआ पार हो गया। हरिचन्द के क्रोध का कोई पार नहीं था।

13- क्रोध में भरे हरिचन्द ने कितने ही शूरवीरों का हनन कर दिया। इस विनाश से सेना में हलचल मच गयी।

14- इसी हन्डूरिये ने रुद्र रस में रंग कर कितने ही राजकुमारों को धरती पर सुला दिया। उसकी सेना में उसका जय-जय कार होने लगा।

15- तभी मेरे अजीतमल ने हिन्डोरिये हरिचन्द की छाती में खेंच कर भाले का प्रहार किया तथा हरिचन्द घायल और बेसुध हो दूर जा गिरा।

16- बाणों की मार से लाल रक्त में रंगे योद्धा जब घोड़ों से गिरते तो वीरगति को प्राप्त हो, सीधे स्वर्ग जाते।

17– गुरु द्रोही तथा अकृतघण खूनी खां पठान हाथ में खुरासानी तलवार लिये पागल सा नाच रहा था। उसकी तलवार से तलवार टकराती तो आग की चिन्गारियां निकल पड़तीं।

अब तो धनुष–वाणों की वर्षा ऐसे हो रही थी जैसे कि एक बहुत बड़ी भीड़ दरवाजा तोड़कर निकलती है। बिल्कुल धक्कम–धक्का हो रहा था। तीर की चोटों से घोड़े पृथ्वी पर मरे पड़े थे अथवा खूनी खां की तरह भाग रहे थे।

18– रण भेरी बड़े वेग पूर्ण स्वर में बज उठी है। नगाड़ों पर चोट तेजी से पड़ भयंकर नाद करने लगी है। दोनों ओर के योद्धा एक दूसरे को ललकार रहे हैं और अपने दल बल से प्रहार करने लगे हैं।डाकणी डकराने और चान्डवी चटकारने लगी है।

19– युद्ध का वेग बढ़ गया है। किसी को किसी की चिन्ता नहीं, बस एक ही लक्ष्य है–मारो। और मरने वालों की संख्या तो हजार से ऊपर हो चली है। कहाँ तक वर्णन करु इस हो रहे युद्ध का : कितने नपुंसक डर कर भागे होंगे।

20– पहाड़ी राजा भी घोड़े की ओर अपनी दुम दबा कर भागे। मेरे वीरों ने जाते और भागते शत्रु पर कोई शस्त्र नहीं चलाया।

जस्सोवाल की सेना जो भी बची थी तथा डड़वाल के मधुकर शाह के साथी कुछ देर अड़े लड़ते रहे मगर थोड़ी देर में ही इन के पैर उखड़ गये तथा वे अपने सिपाहियों सहित भाग गये।

21– चन्देल का गाजी चन्द यह सब देखकर चकित हो उठा और जोश में आकर जूझ पड़ा। उधर से शूरवीर हरिचन्द भी हाथ में बरछा लेकर आ गया और अपनी स्वामी भक्ति का पूर्ण परिचय देता हुआ। जैसे सन्धया में सूर्य डूब जाता है वैसे ही टुकड़े–टुकड़े होकर वीरगति को प्राप्त हो गया।

22– एक और बेईमान धोखा देने वाले नजावत खां ने पीछे से संगोशा पर वार किया तथा पठानों ने चारों ओर से "शाह" को घेर कर तीरों से बींध दिया। इस प्रकार संगोशाह वीरगति को प्राप्त हो स्वर्ग सिधार गये मगर उससे पहले अपनी तलवार के वार से नजावत खां को दोजख की आग में झोंक गये।

23– इस प्रकार नजावत को मार कर गुरु गोविन्द सिंह जी का यह योद्धा भाई जब वीरगति को प्राप्त हुआ तो हा–हा कार मच गया तथा उनका स्वागत स्वर्ग में जयकारों के साथ हुआ।

24– संगोशाह, तेरे युद्ध में वीरगति पाते देख इस दास (गुरु गोविन्द सिंह) ने भी धनुष वाण संभाला। एक तीर मैंने राव पठान को मारा। वह ऐसे दिखाई दिया कि उस तीर के छूने पर जैसे उसे काले नाग ने डस लिया हो। वह सीधा ही भूमि पर गिरा और मर गया।

25– नजाबत खां के साथी भीखन खां को मैंने तान कर दूसरा तीर मारा, जो उसके मुख पर लगा। वह घायल होकर भाग निकला परन्तु मेरे तीसरे तीर से उसका घोड़ा पृथ्वी पर गिरा और मर गया।

26- हरिचन्द की मूर्छा खुली, होश में आते ही उसने फिर धनुष संभाला तथा इस तेजी से वर्षा करने लगा कि जिस के तन में भी उस का तीर लगता वह सीधा मृत्यु को प्राप्त होता।

27- वह एक बार में दो-दो बाण खेंच रहा था। वीरों के साथ-साथ हाथी भी भूमि की धोली नापने लगे। जिस-जिस ने भी उसके तीर का स्पर्श लिया वह सदा के लिये मीठी नींद सो गया।

28- डाकिनी झुण्ड रक्त पी-पी कर डकार रहे थे। भूत प्रेत बैताल सुधसिध चाण्डलिनें हंस-हंस कर नाचने लगी हैं। तथा वीरगणों ने जीवन दान देकर स्वामी भक्ति का उचित परिचय दिया है।

29- हरि चन्द बड़े क्रोध में आ गया था उसने खेंच कर पहला तीर (गुरु गोविन्द सिंह जी) के घोड़े को मारा। दूसरा तीर उसने ताक से मेरी ओर निशाना लगाया। दैवीय कृपा से मैं बच गया तीर मात्र छूता हुआ मेरे कान के पास से निकल गया।

30- तभी उसके तीसरे तीर ने वक्ष में बंधी पेटी को भेदा तथा कछुऐ की खाल से बने कवच से निकलता हुआ निकल गया, शरीर उसके प्रहार से बचा रहा।

31- हरि चन्द के प्रहार से जो तीर मेरी ओर आये थे उन्होंने मुझे भी उचित उत्तर देने, अर्थात् अपने में जोश उत्पन्न करने को बाध्य किया। मैंने कमान में तीर रखा और खेंच कर मारा।

32- मेरा तीर चलता देख बाकी के शूरवीर भी बाज की तरह टूट पड़े। शत्रु पर तीरों की वर्षा होने लगी। एक ओर से और मृत्यु का प्रहार होने लगा।

33- तभी हरि चन्द ने प्राण दे दिये। उसके साथ मिल कर युद्ध करने वाले योद्धा भी वीरगति को प्राप्त हो गये। एक और नरेश जिस पर फतहशाह निर्भर था, मारा गया।

34- तभी सब शत्रु रण त्याग कर भाग गये वह भय से इतने भयभीत थे कि भागते हुए भी कांप रहे थे। काल की कृपा से मेरी विजय हो गई।

35- जय-जय कार करते विजय नाद बजाते घर लौटे। योद्धाओं को बहुत से धन से पुरुस्कृत किया। विजय और पुरुस्कारों से सभी वीर हर्षित थे।

36- युद्ध विजय के पश्चात् शीघ्र ही पौंटा को छोड़ देने की योजना बनी तथा पुनः कहलूर लौट आये और उस गाँव का नाम आनन्दपुर रखा।

37- सेना और संगत में जो-जो व्यक्ति युद्ध में मेरे साथ नहीं आये, युद्ध नहीं किया मैंने उन्हें निकाल दिया। उस नगर में उन्हें कोई स्थान नहीं दिया और जो योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए थे उनके परिवारों को सुरक्षा दी।

– इस प्रकार व्यवस्था करते कई वर्ष लग गये। इस बीच में भी संतों की सेवा और रक्षा का कार्य बन्द नहीं किया। दुष्टों का दमन भी होता रहा। जितने भी [illegible] और क्रूर व्यक्ति सामने आये वह या तो हमारे जवानों द्वारा मारे गये अथवा स्वयं ही कुत्ते की मौत मारे गये।

इति श्री विचित्र नाटक अष्टम अध्याय समाप्त अस्तू

श्री विचित्र नाटक

नौंवा अध्याय

अथ नदौण का युद्ध बरननं

।।चौपाई।।

बहुत कालि इह भाँति बितायो।
मीआखान जंमू कह आयो।
अलफखान नादौण पठावा।
भीमाचंद तन बैर बढावा ।।1।।

जुद्ध काज न्रिप हमै बुलायो।
आपि तवन की ओर सिधायो।
तिन कठगड़ नवरस पर बाँधों।
तीर तुफंग नरेशन साँधों ।।2।।

।।भुजंग छंद।।

तहा राज सिंधं बली भीमचंदं ।
चड़िओ रामसिंघं महाँ तेजवंदं।
सुर्यदिव गाजी जसारोट राजं।
चड़े क्रुद्ध कीने करे सरब काजं ।।3।।

प्रिथोचंद चड़ियो डढे डढवारं ।
चले सिध ह्वै काज राजं सुधारं।
करी ढूक ढोअं किरपालचंदं।
हटाए समै मारि कै वीर ब्रिंदं ।।4।।

दुतिय ढोअ ढूकै वहै मारि उतारी ।
खरे दाँत पीसै छुभै छत्रधारी।
उतै वैखरे बीर बंबै बजावैं।
तरे भूप ठाँढे बडो सो कुपावैं ।।5।।

तबै भीमचंदं कीयो कोप आपं।
हनूमान के मत्रं को मुख जाप्रं।
सभै वीर बोले हमै भी बुलायं।
तबै ढोअ कक् कक् सुनो के सिधायं ।।6।।

सभै कोप कक् कै महाँबीर ढूके।
चले बारिदे बारको जिउ भभूके ।

तहां बिझुड़िआलं हठियोबीर दयालं।
उठियो सैन लै संगि सारो क्रिपालं ।।7।।

।।मधुमार छंद।।

कुप्पिओ क्रिपाल।
नच्चे मराल।
बज्जे बजंत।
क्रुरं अनंत ।।8।।

जुज्झंत जुआण ।
बाहै क्रिपाण।
जीअ धारि क्रोध ।
छडडे सरोप ।।9।।

लुज्झै निदाण।
तज्जंत प्राण।
गिर परत भूम ।
जणु मेघ झूम ।।10।।

।।रसावल छंद।।

क्रिपाल कोप्यं।
हठी पाव रोप्यं।
सरोघं चलाए।
बड़े वीर घाए ।।11।।

हणे छत्रधारी।
लिटे भूप भारी।
महॉ नाद बाजे।
भले सूर गाजे ।।12।।

क्रिपालं करुद्धं।
कीयो जुद्ध सुद्धं।
महॉबीर गज्जे।
महॉ सार बज्जे ।।13।।

करियो जुद्ध चंडं ।
सुणियो नाव खंडं।
चलियो शसत्र बाही।
रजौती निबाही ।।14।।

।।दोहरा।।

कोप भरे राजा सभै कीनो जुद्ध उपाइ।
सेन कटोचन की तबै घेर लई अरराई ।।15।।

।।भुजंग छंद।।

चले नांगल पांगल वेदडोलं।
जसवारे गुलेरे चले बाँधं टोलं।
तहाँ एक बाजियो महाँबीर दयालं।
रखी लाज जौनै सभै बिझड़वाल ।।16।।

तवं कीट तौली सुपंगं संभारो।
हिंद्दे एक रावतं के तक्कि मारो।
गिरियो झूम भूम करियो जुद्ध सुद्धं।
तऊ मारि बोलियो महाँ मानि क्रुद्धं ।।17।।

तजियो तुपकं बान पानुं संभारे।
चतुर बानयं लै सु सब्बियं प्रहारे।
त्रियो बाण लै बाम पाणं चलाए।
लगे या लगे ना कछू जानि पाए ।।18।।

सु तउ दईव जुद्ध कीनो उझारं।
तिनै खेद कै बारि के बीच डारं।
परी मार बुंगं छुटी बाण गोली।
मनो सूर बैठे भली खेल होली ।।19।।

गिरे बीर भूमं सरं सांग पेलं।
रंगे स्त्रोण बसत्रं मनो फाग खेलं।
लीयो जीति बैरी कीया आन डेरं।
तेऊ जाइ पारं रहे बारि केरं ।।20।।

भई रात्र गुबार के अरध जामं।
तबै छोरिगे बार देवै दगामं।
सभै रात्रि बीती उदियो दिउसराणं।
चले बीर चालाक खग्गं खिलाणं ।।21।।

भज्यो अलफखानं न खाना संभार्यो।
भजे और बीरं न धीरं विचार्यो।
नदी पै दिनं अशट कीने मुकामं।

भली-भाँति देखे सभै राज धामं ।।22।।

।।चौपाई।।

इत हम होई बिदा घरि आए।
सुलह नमित वै उतहि सिधाए।
संधि इनै उनके संगि कई।
हेत कथा पुरन इत भई ।।23।।

।।दोहरा।।

आलसून कह मारिकै इह दिसि दियो पियान।
भाँति अनेकन के करे पुर अनंद सुख आन ।।24।।

।।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे नदौन जुद्ध बरननं नामु नौमो धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।9।।
।।अफजू।।344।।

विचित्र नाटक

नौंवा अध्याय

।।अथ नादौण युद्ध वर्णन।।

1– आनन्दपुर में शांति से हर प्रकार से सिद्धता प्राप्त करते बहुत काल (काफी समय) बीत गया। तब दिल्ली सरकार का मियां खां स्वयं तो जम्मू चला गया तथा अपने साथी सेनापति अलिफ खां को नादौण भेजता गया। उसने आते–आते कहलूर के राजा भीम चन्द से शत्रुता कर ली।

2– युद्ध में भाग लेने हेतु भीम चन्द ने मुझे प्रार्थना सन्देश भेजा और स्वयं अलिफ खां से मोर्चा लेने प्रस्थान कर गया। उधर उन्होंने एक काठ का गढ़ नवरस नामक पहाड़ी पर तैयार किया। नरेशों ने अपने शस्त्र जिस में तीर थे, तुफंग (बन्दूकें) आदि थें, का भण्डार एकत्र कर लिया।(दिल्ली की सत्ता को नष्ट करना ठीक है अतः मैनें भी युद्ध में भाग लेने का निश्चय किया)

3– राजा भीम चन्द ने और भी कई राजाओं को बुला भेजा था अतः राजा राज सिंह तथा राजा राम, जिनका बड़ा ही तेज तथा प्रभाव था, अपने दल–बल के साथ चढ़ आये। राजा सुखदेव गाज़ी, जिसे इन सब कार्यों में काफी रुचि थी और जो सदा ही हर कार्य के लिये आगे रहता था, रौद्ररस में प्रवीण साथ देने हेतु आ गया ।

4– राजा भीम चन्द का युद्ध में हाथ बंटाने हेतु पूर्ण सिद्धता से शक्तिशाली राजा छडवाल, जिसका नाम पृथ्वी चन्द था शत्रु को पराजित करने आ गया। आगे से कांगड़े के राजा कृपाल चन्द ने सामना किया और एक बार फौज में हलचल सी मच गई और सभी योद्धा योजना से पीछे हटे अथवा मार इतनी तेज थी कि योद्धागणों के पैर उखड़ रहे थे।

5– दूसरी बार फिर साहस कर आगे बढ़े मगर दुश्मन का जोर बहुत था। सभी छत्रपति यह देख दांत पीस रहे थे। दूसरी ओर बड़े जोर से नगाड़ों पर चोट दे अपनी जीत होने की और कदम आगे बढ़ाने की सूचना दे रहे थे। और पहाड़ी राजा शोकातुर हो रहे थे।

6– यह देख भीम चन्द को क्रोध आया और उसने हनुमान मन्त्र का जाप किया। जै बजरंग का नारा लगा कर पीछे हट रही सेना में नवीन स्फूर्ती का सर्जन किया साथ ही बाकी के नरेशों में भी उत्साह बढ़ गया। मुझे भी उसने प्रार्थना की कि मैं युद्ध करु और फिर सबने योजना से एक ही बार हल्ला बोल दिया।

7– सब योद्धा बजरंग बली महावीर की जै–जै करते क्रोध से टूट पड़े वे सब अब ऐसे बढ़े थे जैसे चारों ओर खड़ी की गई बाधाओं को अग्नि के गोले राख कर देते हैं। उधर भी अब सेना ने अपनी पूर्व योजना में परिवर्तन किया। दयाल चन्द तथा कृपाल चन्द की फौज सामने आ गई।

8– कृपाल चन्द ने घोड़े को चारों ओर भगाना और नचाना प्रारम्भ किया। रण–भेरी में तेजी आ गई। वीर रस की वर्षा होने लगी।

9– युवक योद्धा जूझ पड़े। क्रोध के साथ तीर और तलवार का घमासान युद्ध होने लगा।

10– अब उनके सामने केवल एक ही निदान था। युद्ध, उसमें जीतना अथवा प्राण देना। वह भूमि पर जब गिरते तो लगता जैसे मेघ ही टूट पड़ा हो।

11– कृपाल चन्द ने पुनः अपने उखड़ते पैर जमा लिये थे और अपने तीरों की वर्षा से बड़े–बड़े शूरवीरों का हनन कर रहा था।

12– कितने हीं क्षत्रधारी राजा वीरगति को प्राप्त हो गये। महानाद होने लगा और शूरवीर गर्जन करने लगे।

13– वीरों द्वारा क्रोध के प्रभाव से बेसुध होकर युद्ध होने लगा। वीरों ने ललकारते और जयकार करते हुए शस्त्रों की वर्षा प्रारम्भ कर दी।

14– राजपूतों वाली हठ धर्मी का प्रदर्शन करता कृपाल चन्द अन्धा–धुन्द युद्ध करता गया। ऐसा जेसे वह अपने लिये ही नौखण्डों में योद्धा होने की धूम मचा देना चाह रहा हो।

15– इस मूर्खता को और सहन न कर अलिफ खां के साथ देने वाले इस राजपूत की सेना को हमारी संयुक्त सेना ने घेरे में ले लिया।

16– अब राजा संधर चन्द नागंलू की वंश तथा पंगवाल बेदड़ोल, जसवारे, गुलेरे (ये सब स्थानों के नाम हैं) योद्धाओं को साथ ले एक वाहिनी बना, शत्रू पर टूट पड़े। उनमें से एक महावीर भी प्रसन्न होकर उनका साथ देने लगा जिससे बिजड़वालों की लाज बच गई।

17– हे प्रभु, तेरे इस कीट ने बन्दूक संभाल कर जो एक बार राजा का निशाना लिया और वह क्रोध से "लड़ता रहूंगा" ही कहता हुआ वीरगति को प्राप्त हो गया।

18– मैनें बन्दूक का प्रयोग बन्द कर धनुष पकड़ा और तीरों की वर्षा शुरु कर दी। चार–चार तीर दांयें से और तीन–तीन बायें हाथ से चला रहा था वह किसी शत्रु को लग रहे थे अथवा नहीं इसका विचार मैंने छोड़ दिया था।

19– मेरे और संयुक्त राजा की सेना के तीरों ने अलिफ खां की फौज और उनके सहयोगी राजपूतों को वह मार मारी कि वह नदी में गिरने लगे। गोली और तीरों की मार से घायल ऐसे भूमि पर पड़े थे मानों होली खेल कर सुस्ता रहे हों।

20– अनेकों वीर भालों और तीरों से बींधें भूमि पर पड़े थे जैसे सब ने फाग खेला हो। रात्रि को अपने ठिकाने पर वापस आ गये। आज का मैदान मार लिया था। शत्रु भी नदी पार जा कर आराम का अभिनय करने लगा।

21– अभी काफी रात्रि बाकी थी। जब शत्रु दल की ओर से आग जलने लगी तथा

नगाड़ा बज उठा। दिन होने पर देखा कि वे कुछ आदमी आग जलाने हेतु तथा नगाड़ा बजा कर यह भ्रमित सूचना देकर कि हम सावधान हैं, स्वयं भाग गये थे। यह देख कर हमारे शूरवीर कृपाण लेकर नदी के उस पार तक शत्रु के पीछे भागे।

22- अलिफ खां सिर पर पैर रख कर ऐसा भागा कि अपने घायलों को भी मुड़ कर नहीं देखा। कोई भी सिपाही उस पक्ष का ऐसा नहीं निकला जिसने धीरज से युद्ध किया हो, सभी कायर बन भाग निकले। विजय होने पर राजा भीम चन्द के आग्रह पर हम सब आठ दिन नदी के किनारे शिविर में रहे तथा उसने हमें अपने सब राज महलों में भ्रमण करवाया।

23- इस प्रकार जब वह (परमानन्द, –राजा का महामंत्री) जब उधर सन्धि वार्ता में गया तो हमने राजा भीम चन्द से विदा ली। उनकी वहाँ सन्धि हो गई और यह कथा यहीं पूर्ण हो गई।

24- आलसून के विरोधी नागरिकों का शोध कर हम आनन्दपुर आ गये, जहाँ कई आनन्ददायक उत्सव हुए।

इति श्री विचित्रं नाटक ग्रंथे नदौण युद्ध
नाल नौमौ अध्याय समाप्तंस्तु शुभमंस्तु ।।9।।अफजू ।344।

श्री विचित्र नाटक

दसवां अध्याय

।।चौपाई।।

बहुत बरय इह भाँति बिताए।
चुनि चुनि चोर सभै गहि घाए।
केतकि भाजि शहिर ते गए।
भूख मरत फिरिआवत भए ।।1।।

तब लौ खान दिलावर आए।
पूत अपन हम ओर पठाए।
द्वैकु घरी बीती निसि जबै।
चड़त करी खानन मिलि तबै ।।2।।

जब दल पार नदी के आयो।
आन आलमै हमै जगायो।
शोरु परा सभ ही नर जागे।
गहि गहि शस्त्र बीर रिस पागे ।।3।।

छूटन लगी तुफंगे तब ही।
गहि गहि शसत्र रिसाने सभ ही।
क्रूर भाँति तिन करी पुकारा।
शोरु सुना सरता के पारा ।।4।।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

बजी भेर भुंकार धुंके नगारे।
महाँवीर बानैत बंके बकारे।
भए बाहु आघात नच्चे मरालं।
क्रिपा सिंधु काली करज्जी करालं ।।5।।
नदीयं लखियो काल रात्रं समानं।
करे सूरमा सीत पिंगं प्रमानं।
इते बीर गज्जे-भए नाद भारे।
भजे खान खूनी बिना शसत्र झारे ।।6।।

।।नराज छंद।।

निलज्ज खान भज्जियो।
किनी न शसत्र सज्जियो।

सु त्याग खेत कौ चले।
सु बीर बीरहा भले ।।7।।

चले तुरे तुराइकै ।
सके न शसत्र उठाइकै ।
न लै कथिआर गज्जंही।
निहार नारि लज्जही ।।8।।

।।दोहरा।।

बरवा गॉउ कै करे मुकाम भलान ।
प्रभ बल हमै न छुइ सकै भाजत भए निदान ।।9।।

तव बल इहां न पर सकै बरवा हना रिसाइ।
सालिन रस जिम बानीयो रोरन खात बनाइ ।।10।।

।।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे खानजादे को आगमन त्रासित उठि जैबो बरननं नाम दसमो धिआई समापतम सतु सुभग सतु ।।10।। अफजू ।।354।।

श्री विचित्र नाटक
दसवां अध्याय

1– अब काफी समय हम इसी भाँति कभी शिकार खेल कर, कभी गुरुओं की जीवनी की चर्चा सुन और सुनाकर, कभी कवि दरबार सजा कर, कभी संगठन हेतु शक्ति का संचय करने में व्यतीत करते रहे। आनन्दपुर तथा आसपास के क्षेत्र भी उत्पात मचाने वालों से अथवा दूसरों के धन–धान्य लूटपाट करने वाले चोरों का तथा शाँति भंग करने वालों का चुन–चुन कर शोध किया और सारा क्षेत्र ऐसे तत्वों से साफ हो गया। कुछ तो सदा के लिए सो गये अथवा भाग गये और कुछ भूख–प्यास से व्याकुल होकर अपने जीवन को बचाने के लिए शरण में आ गये और अपने आप को सीधे मार्ग पर ले आये।

2– एक बार फिर दिलावर खां की बासी कढ़ी में उबाल आया तथा उसने अपने पुत्र को हमारी ओर भेजा।

दो घड़ी रात्रि समाप्त हुई होगी जब पठानों ने नदी पार कर ली और एकत्र हो गये।

3– इस सारी गतिविधि को मेरे जवान देख रहे थे और उनके नदी पार करते ही मेरे अंगरक्षक आलम ने मुझे सूचित किया तभी हमारे शूरवीरों ने योजनापूर्वक हल्ला बोल दिया। और क्रोध और वीर रस से पूर्ण इन नौजवानों ने अपने शस्त्रों का प्रयोग शुरु किया।

4– चुन–चुन कर शत्रु पर प्रहार हो रहा था और बुज़दिलों की तरह पठान भाग रहे थे। तभी बन्दूकों और तोपों के मूंह खुल गये और नदी में डूबते तथा सरसा के पार प्राण त्यागते शत्रुओं की चिल्लाहट सुनाई देने लगी।

5– अलग–अलग संकेत देती हुई रणभेरी बज उठी, नगाड़ों पर चोट पड़ने लगी। महावीर का नाद करते हुए हमारे जवान शत्रुओं पर और घोड़े के खुर शत्रुओं की खोपड़ियों पर टूट पड़े थे। काली की कृपा से हमारे जवानों का मन विजय की प्रसन्नता से भर गया था और वे गरज रहे थे।

6– काली और शीत रात्रि तथा पीछे भयंकर वेग से बहती सरसा नदी शत्रुओं को पंगु बनाते हुए काल रुप बन गई थी तथा वे शस्त्र छोड़–छोड़ कर भाग रहे थे। इधर हमारे वीर विजय का नाद करते हुए ऐसे टूट पड़े थे जैसे कि वे आज सब शत्रुओं का नाश कर देंगे जो बच गये थे वो निर्लज्ज खूनी खां सहित शस्त्र छोड़ कर भाग गये थे। ये वो थे, जो अपने को शूरवीर समझते थे।

7– वो अपने बचे –खुचे घोड़े भगा कर ले गये। कोई भी शस्त्र न उठा सके और न ही किसी शस्त्र को हाथ में लेकर युद्ध कर सके। वह स्त्रियों के व्यंग्य सुन कर शर्म के कारण मुंह छिपाते हुए भागते गये।

8– वह बेशर्म हमको तो कुछ न कह सके परन्तु बरवा गाँव के निहत्थे लोगों को

उजाड़ते हुए दूसरे गाँव भलान में अपना डेरा किया। ईश्वर की कृपा से वे हमें छू तक न सके और मुंह की खाकर भाग गये।

9– जैसे बनिया मांस खाने की इच्छा होने पर भी शर्म के कारण खाता नहीं तो उसके स्थान पर पत्थरों को ही हड्डियाँ समझ कर चूसने लगता है वैसे ही ये पठान जब हमारा तो कुछ बिगाड़ न सके तब खिसयानी बिल्ली की तरह कमजोर बरवा गाँव को ही उजाड़ गये।

इति श्री विचित्र नाटक ग्रंथे खानजादे को त्रयास्तु उठ जप वो वर्णन नाम दसवों अध्याय समाप्तमस्तु ।।10।।
अफजू–354

श्री विचित्र नाटक

ग्यारहवाँ अध्याय

हुसैनी युद्ध कथनं

।। भुजंग प्रंयात छंद।।

गये खानजादा पिता पास भज्जं।
सकै ज्वाबु दे ना हने सूर लज्जं।
तहा ठीक बाहॉ हुसैनी गरज्जियं।
सभै सूर लै कै सिला साज सज्जियं ।।1।।

करियो जोर सैनं हुसैनी पयानं।
प्रथम कूटिकै लूट लोने अवानं।
पुरनि डड्ढवालं कीयो जीत जेरं।
करे बंदि कै राज पुत्रान चेरं ।।2।।

पुनरि दून को लूट लीनो सुधारं।
कोई सामुहे ह्वै सकियो न गवारं।
लीयो छीन अंनं दलं बाँटि दोयं।
महॉ मूड़ियं कुतसतं काज कीयं ।।3।।

।। दोहरा ।।

कितक दिवस बीतत भए करत उसै उतपात।
गुआलेरीयन की परत भी आन मिलन की बात ।।4।।

जौ दिन दुइक न बे मिलत तब आवत अरराइ।
कालि तिनू के घर बिखै डारी कलह बनाइ ।।5।।

।। चौपाई ।।

गुआलेरीया मिलन कह आए।
रामसिंघ भी संगि सिधाए।
चतरथ आन मिलत भए जामं।
फूटि गई लखि नजरि गुलामं ।।6।।

।। दोहरा ।।

जैसे रवि के तेज ते रेत अधिक तपताइ।
रबि बल छद्र न जानई आपन ही गरबाइ ।।7।।

।। चौपाइ ।।

तैसे ही फूल गुलाम जाति भयो।
तिनै न द्रिशट तरे आनत भयो।
कहलूरीया कटौच संगि लहि।
जाना आन न मो सरि महि महि ।।8।।

तिन जो धन आनो थो साथा।
ते दे रहे हुसैनी हाथा।
देत लेत आपन कुरराने।
ते धनि लै निजि धाम सिधाने ।।9।।

चेरो तबै तेज तन तयो।
भला बुरा कुछ लखत न भयो।
छंद बंद नह नैकु बिचारा।
जात भयो दे तबहि नगारा ।।10।।

दाव घाव तिन नैकु न करा।
सिंघहि घरि ससा कहु डरा।
पंद्रह पहरि गिरद तिह कीयो।
खान पान तिन जान न दीयो ।।11।।

खान पान बिनु सुर रिसाए।
साम करन हित दूत पठाए।
दास निरख संगि सैन पठानी।
फूलि गयो तिन की नही मानी ।।12।।

दस सहंस्त्र अबही कै देहू।
नातर मीच मूंड पर लैहू।
सिंघ संगतीया तहा पठाए।
गोपालै सु धरमु दे ल्याए ।।13।।

तिन के संगि न उनकी बनी।
तब क्रिपाल चित मो इह गनी।
ऐसि घाति फिरि हाथ न ऐहै।
सभहू फेरि समो छलि जैहै ।।14।।
गोपालै सु अबै गहि लीजै।
कैद कीजीऐ कै बध कीजै।
तनक भनक जब तिन सुन पाई।
निज दल जात भयो भटराई ।।15।।

।।मधुमार छंद।।

जब ग्यो गुपाल।
कुप्यो क्रिपाल।
हिंमत हुसैन।
जुमै लुझैन ।।16।।

करिकै गुमान।
जु मै जुआन।
बज्जे तबल्ल।
दुदंभ दबल्ल ।।17।।

बज्जे निशाण ।
नच्चे किंकाण।
बाहै तड़ाक।
उंट्ठै कड़ाक ।।18।।

बज्जे निशाग।
गज्जे निहंग।
छुट्टै क्रिपान।
लिंट्टै जुआन ।।19।।

तुप्पक तड़ाक।
कैंबर कड़ाक।
सैहथी सड़ाक।
छौही छड़ाक ।।20।।

गज्जे सु बीर।
बज्जे गहीर।
बिचरे निहंग।
जैसे पिलंग ।।21।।

हुक्के किकाण।
धुक्के निशाण।
बाहै तड़ाक।
झल्लै झड़ाक ।।22।।

जुज्झे निहंग।
लिंट्टे मलंग।
खुल्ले किसार।
जनु जटा धार ।।23।।

सज्जे रजिंद्र।

गज्जे गजिंद्र।
उत्तरि खान।
लै लै कमान ।।24।।

त्रिभंगी छंद ।।

कुपियो किरपालं सज्जि मरालं बाह बिसालं धरि ढालं।
धाए सभ सूरं रुप करुरं चमकत नूरं मुखि लालं।
लै लै सु क्रिपानं बान कमानं सजे जुआनं तन सत्तं।
रणि रंग कलोलं मार हि बोलं जनु गज डोलं बन मत्तं ।।25।।

।। भुजंग छंद ।।

तबै कोपियं रांगडेशं कटोचं।
मुखं रकत नैनं तजे सरब सोचं।
उतै उद्धियं खान खेतं खतंगं।
मनो बिहचरे मास हेतं पिलंगं ।।26।।

बजी भेर भुंकार तीरं तड़क्के।
मिले हत्थि बत्थं क्रिपानं कड़क्के।
बजे जंग नोसाण कत्थे कथीयं।
फिरै रुड मुंडं तनं तच्छ तीरं ।।27।।

उठै टोप टूकं गुरज्जै प्रहारे।
रुले लुत्थ जुत्थं गिरे बीर मारे।
परै कत्तियं घात निरघात बीरं।
फिरै रुड मुंडं तनं तच्छ तीरं ।।28।।

बहो बाहु आघात निरघात बाणं।
उठे नद्द नादं कड़क्के क्रिपाणं।
छके छोभ छत्री तजे बाण राजी।
बहे जाहि खाली फिरै छूछ ताजी ।।29।।

जुटे आप मै बीर बीरं जुझारे।
मनो गज्ज जुट्टे दंतारे दंतारे।
किधो सिंध सो सारदूलं अरुज्झे।
तिसी भाँति किरपाल गोपाल जुज्झे ।।30।।

हरीसिंघ धायो तहां एक बीरं।
सहे देह आपं भली भांति तीरं।
महां कोप कै बीर ब्रिंदं संघारे।
बडो जुद्ध कै देवलोकं पधारे ।।31।।

हठी हिंमतं किंमतं लै क्रिपानं।
लए गुरज चल्लं सु जल्लाल खानं।
हठे सूरमा मत्त जोधा जुझारं।
परी कुट्ट कुट्टं उठी शस्त्र झारं ।।32।।

।रसावल छंद ।।

जसंवाल धाए।
तुरंग नचाए।
लयो घेरि हुसैनी।
हन्यो साँग पैनी ।।33।।

तिनू बाण बाहे।
बडे सैन गाहे।
जिसै अंगि लाग्यो।
तिसै प्राण त्याग्यो ।।34।।

जबै घाव लाग्यो।
तबै कोप जाग्यो।
संभारी कमाणं।
हणे बीर बाणं ।।35।।

चहूं ओर ढूके।
मुखं मार कूके।
न्रिभै शस्त्र बाहैं।
दोऊ जीत चाहैं ।।36।।

रिसे खानज़ादे।
महां मद्द मादे।
महां बाण बरखे।
सभै सूर हरखे ।।37।।

करै बाण अरचा।
धनुरबेद चरचा।
सु साँगं सम्हालं।
करै तउन ठामं ।।38।।

बली बीर रुज्झे।
समुह शस्त्र जुज्झे।
लगै धीर धक्कै।
क्रिपाणं झनक्कै ।।39।।

कड़क्कै कमाणं।
झणंके क्रिपाणं।
कड़क्कार छुट्टै।
झणंकार उट्ठै ।।40।।

हठी शस्त्र झारै।
न शंका बिचारै।
करै तीर मारं।
फिरै लोह धारं ।।41।।

नदी स्त्रोण पूरं।
फिरै गैण हूरं।
उभे खेत पालं।
बके बिक्करालं ।।42।।

।। पाधड़ी छंद ।।

तह हड़हड़ाइ हस्से मसाण।
छ्हि गजिंद्रि छुट्टे किकाण।
जुट्टे सु बीर तह कड़क जंग।
छुट्टी क्रिपाण बुट्टे खतंग ।।43।।

डाकन डहक्कि चावड चिकार।
काकं कहक्कि बज्जै दुधार।
खोलं खड़क्कि तुप्पकि तड़ाकि।
सैथैं सड़क्कि धक्कं धहाकि ।।44।।

।। भुजंग छंद ।।

तहा आप कीनो हुसैनी उतारं।
सभू हाथ बाणं कमाणं संभारं।
रूपे खान खूनौ करै लाग जुद्धं।
मुखं रकत नैणं भरे सूर क्रुद्धं ।।45।।

जग्यो जंग जालम सु जोधं बुझारं।
बहे बाण बाँके बरच्छी दुधारं।
मिले बीर बीरं महाँ धीर बंके।
धका धक्कि सैथं क्रिपाणं झनंके ।।46।।

भए ढोल ढंकार नद्दं नफीरं।
उठै बाहु आघात गज्जै सु बीरं।
नभं नद्द नीशान बज्जे अपारं।

रुले तच्छ मुच्छं उठी शस्त्र झारं ।।47।।

टका टुक्क टोपं ढका ढुक्क ढालं।
महां बीर बानैत बंके बिक्रालं।
नचे बीर बैतालयं भूत प्रेतं।
नची डाकिणी जोगणी उरध हेतुं ।।48।।

छुटो जोग तारी महाँ रुद्र जागे।
डग्यो ध्यान ब्रहमं सभै सिद्ध भागे।
हसे किंनरं ज्च्छ बिद्दिआ धरेयं।
नची अच्छरा पच्छरा चारणेयं ।।49।।

पर्ओ घोर जुद्धं सु सैना परानी।
तहाँ खाँ हुसैनी मंडिओ बीर बानी।
उतै बीर धाए सु बीरं जस्वारं।
सभै बिउत डारे बगा से अस्वारं ।।50।।

तहां खां हुसैनी रह्यो एक ठाढं।
मनो जुद्ध खंभं रणं भूम माडं।
जिसै कोप कै कै हठी बाणि मार्यो।
तिसे छेद कै पैल पारे पधार्यो ।।51।।

सहे बाण सूरं समै आप ढूकै।
चहूं ओर ते मार ही मार कूकै।
भलो भाँति सो अस्त्र अउ शस्त्र झारे।
गिरे भिशत को खाँ हुसैनी सिधारे ।।52।।

।। दोहरा ।।

जबै हुसैनी जुज्झियो भयो सूर मन रोसु।
भाजि चले अवरै सभै उठ्यो कटोचन जोसु ।।53।।

।। चौपाई ।।

कोपि कटोचि सभै मिलि धाए।
हिंमति किंमति सहित रिसाए।
हरीसिंघ तब किया उठाना।
चुनि चुनि हने पखरिया जुआना ।।54।।

।। नराज छंद ।।

तबै कटोच कोपीयं।
संभार पाव रोपीयं।

सरक्क शस्त्र झारही।
सु मारि मारि उचारही ।।55।।

चंदेल चौपियं तबै।
रिसात धात भे सबै।
जिते गए सु मारियं।
बचे तिते सिधारियं ।।56।।

।। दोहरा ।।

सात सवारन के सहित जूझै संगत राइ।
दरसो सुनि जुज्झै तिनै बहुर जुझत भ्यो आइ ।।57।।

हिंमत हूं उतर्यो तहाँ बीर खेत मंझार।
केतन के तर्ा. घाइ सहि केतनि के तनि झार ।।58।।

बाज तहाँ जू़...। भयो हिंमत गयो पराइ।
लोथ क्रिपालहि की नमित कोपि परे अरराइ ।।59।।

।। रसावल छंद ।।

बला बैर रुज्झै।
समुहि सार जुज्झै।
क्रिपाराम गाजो।
लर्यो सैन भाजी ।।60।।

महां सैन गाहै।
न्रिभै शस्त्र बाहै।
धन्यो काल कै कै।
चलै जस्स लै कै ।।61।।

बजे संख नादं।
सुरं निरबिखादं।
बजे डौर डड्ढं।
हठे शसत्र कड्ढं ।।62।।

परी भीर भारी।
जुझै क्षत्र धारी।
मुखं मुच्छ बंकं
मंडे बीर हंकं ।।63।।

मुखं मारि बोलै।
रणं भूमि डोलै।

हथ्यारं संभारै।
उभै बाज डारै ।।64।।

।। दोहरा ।।

रण जुज्झत किरपाल कै नाचत भयो गुपाल।
सैन सभै सिरदार दै भाजत भई बिहाल ।।65।।

खान हुसैन किरपाल के हिंमत रण जूझंत।
भाजि चले जोधा सभै जिम दे मुकुट महंत ।।66।।

।। चौपाई ।।

इह बिध शत्रु सभै चुनि मारे।
गिरे आपने सूर संभारे।
तह घाइल हिंमत कह लहा।
रामसिंघ गोपाल सिउं कहा ।।67।।

जिन हिंमत अस कलह बढायो।
घाइल आजु हाथ वह आयो।
जब गुपाल ऐसे सुनि पावा।
मारि दियो जी।अत न अठावा ।।68।।

जीत भई रन भयो उजारा।
सिम्रिति करि सभ घरो सिधारा।
राखि लियो हमको जगराई।
लोह घटा अनतै बरसाई ।।69।।

।।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे हुसैनी बधह क्रिपाल हिंमत सगतोआ बध बरननं नाम गिआरिमों धिआइ समर्पितम सतु सुभम सतु ।।11।। अफजू ।।423।।

श्री विचित्र नाटक

ग्यारहवां अध्याय

हुसैनी युद्ध कथनं

1. दिलावर खां का पराजित पुत्र, रुस्तम खां अपने पिता के सामने शर्म का मारा बोल नहीं पा रहा था। जिस तरह उसने मुगल सेना का और शस्त्रों के भण्डार का नाश मेरे जवानों के हाथ करवाया था, उसका न तो उसे न उसके पिता को कभी स्वप्न में भी विचार आया था। उसके पिता को अपनी आँखों के सामने अपनी नौकरी जाती दिखाई पड़ रही थी। अतः उसने रुस्तम खां को बहुत बुरा-भला कहा। तभी दिलावर खां के एक पालतू गुलाम, हुसैनी ने अपने भुजाओं के पुट्ठों को ठोंकते हुए कहा कि वह गोविन्द सिंह और उसके साथियों को खत्म कर देगा और एक बड़ी सेना लेकर सूबे ने उसे इस कार्य को करने की अनुमति दे दी।

2. अपनी एक बड़ी सेना को एकत्र करके हुसैनी ने आम शहरियों को लूटना शुरु किया फिर उसने डडवाल के राजा मधुकर शाह को अपने शौर्य के कारण जीत लिया इस प्रकार उसने कई छोटे-मोटे राजा और जमींदार कैद कर लिये अथवा अपने अधीन कर लिये।

3. पुनः उसने दून की वादी में बड़ा उत्पात मचाया यहां तक कि निहत्थे शहरियों के घरों से और उनके व्यापार स्थलों से धन-धान्य लूट कर अपनी नीचता का परिचय दिया। कुछ छोटे-मोटे जमींदार उसके अधीन आ गये।

4. इस प्रकार से उत्पात मचाते हुए हुसैनी ने अपना काफी समय इस अल्प कार्य में बिता दिया। गुलेरियां के राजा को भी भय प्रतीत हुआ तो उसने इससे मिलने की बात सोची।

5. यदि दो-एक दिन में वह अपनी इस सोची हुई योजनानुसार हुसैनी से न मिलता तो शायद उसके क्षेत्र में भी हुसैनी उत्पात मचा देता।

6. राजा गुलेरियां ने अपने साथ राम सिंह को लिया और दिन के चौथे पहर में बड़ी शान-शौकत के साथ हुसैनी से मुलाकात करने पहुंचा। मूर्ख गुलाम हुसैनी विद्या हीन होने के कारण समझा कि ये राजा मेरे अधीन आ रहे हैं इसलिए अहंकार वश उनसे योग्य व्यवहार न किया।

7. जिस प्रकार से सूर्य के तेज से बालू के कण तप कर हवा से इधर-उधर उड़ते फिरते हैं और ये पत्थर से टूटे चूर्ण को ये समझ नहीं आता कि पहले ही उसका विनाश सूर्य के कारण हुआ और अब वो उड़ कर सूर्य को ढकना चाहता है और इस प्रकार से अपने अहंकार के कारण अपने को और नष्ट करता है।

8. तैसे ही ये नीच गुलाम, जिसने कभी राजाओं से व्यवहार करना सीखा ही नहीं था, राजाओं के पास आने पर अहंकार में अंधा हो गया और उनसे जो उचित

व्यवहार करना चाहिए था वह नहीं किया। उसने कहलूर के भीम चन्द तथा कटोच के कृपाल चन्द को इकट्ठे देख कर समझा कि मेरे जैसा शूरवीर पृथ्वी पर कोई है ही नहीं।

9. "गोपाल" तथा "राम सिंह" ने अहंकार में मस्त हुसैनी को समझ लिया और कुछ धन निकाल कर हुसैनी के आगे रखते हुए कहा कि आपके लिये इतना ही धन उपयुक्त प्रतीत होता है सो हम ले आये हैं। जिस पर हुसैनी बिगड़ उठा और धन उनकी ओर फेंकते हुए बोला नहीं मुझे तो इससे चार गुना धन चाहिए। बुद्धिमान राजाओं ने ये कह कर कि इसमें नाराज होने की बात नहीं है। हम ये धन ले जाते हैं और किले से पूरा धन भिजवा देते हैं।

10. अहंकार से क्रोध आता है और क्रोध से बुद्धि का नाश हो ही जाता है । अतः हुसैनी ने कुछ न समझते हुए तथा क्रोध से लाल–पीला होकर हाथ आया हुआ धन भी दे दिया और वो दोनों राजा सुरक्षित किले में भी चले गये। "गोपाल" ने अपने आप को किले में बन्द करके अपने कुछ लोगों को सहायता के लिए भेज कर युद्ध की घोषणा कर दी। इस पर हुसैनी ने नगाड़े बजा कर "गोपाल" पर चढ़ाई कर दी।

11. मूर्ख हुसैनी ने ठीक वैसे ही जैसे बहुत से सियार एक शेर को घेरते हैं, "गोपाल" को डराने के लिए उसके किले को चारों ओर से घेर लिया 15 पहर तक कुछ भी खाने–पीने की सामग्री अन्दर नहीं जाने दी।

12. खाने–पीने का सामान अन्दर नहीं गया अतः वीरों में जोश भरने लगा। गोपाल राय चाहता था कि कुछ समय बीत जाय अतः उसने एक शिष्ट मंडल सुलह की बात–चीत करने के लिए भेजा इस पर मूर्ख हुसैनी फूल कर और कुप्पा हो गया। वार्ता लम्बी होती चली गई और ये अपने दाम बढ़ाता गया।

13. पहले शिष्ट मंडल को, यह कह कर कि अगर तुम्हारे राजा को जान बचानी है तो दस हजार चांदी के रांइच सिक्के भिजवा दे और माफी मांगे, वापस कर दिया था। एक बार फिर नये सिरे से संगतिया सिंह जो राजा कहलूरिया को जानता था, गजसिंह गोपाल का दूत बन हुसैनी के पास पहुंचा। संगतिया सिंह को आते देख उनके बात–चीत का तरीका नर्म पड़ गया। राजा कहलूरिया भीम चन्द ने संगतिया सिंह से कहा कि बात–चीत दुबारा शुरु हो सकती है यदि गोपाल स्वयं आये (वास्तविकता ये है कि भीम चन्द को लगा था कि यदि युद्ध हुआ तो जीत न होगी क्योंकि वह गुरु गोविन्द सिंह की सेनाओं के हाथ अच्छी तरह देख चुका था और संगतिया सिंह गुरु जी का भेजा हुआ एक योग्य सेनापति था, जिसका अर्थ था कि गुरु जी का आशीर्वाद गोपाल को प्राप्त हो गया है तथा युद्ध किये बिना ही गोपाल को पकड़ लिया जाय ये सोच कर उसने संगतिया सिंह से उक्त वाक्य कहे थे) और उसकी सुरक्षा हेतु भीम चन्द ने हुसैनी की ओर से धर्म की सौगंध ली।

14. बात–चीत सफल होने का तो प्रश्न ही नहीं था। हुसैनी गुलाम की बुद्धि तो नष्ट हो ही चुकी थी और भीम चन्द हरि चन्द की नीयत में धोखा था उन्होंने सोचा था

कि यह मौका फिर हाथ नहीं आयेगा ये भी शायद दैवीय कृपा है कि वे स्वयं ही हमारे जाल में आ फंसे हैं।

15. गोपाल भी संगतिया सिंह जी के कहने पर और समय को बढ़ाने के लिए चला आया इधर ये दोनों पहाड़ी राजा और हुसैनी षड्यन्त्र करने लगे कि गोपाल को आते ही बात–चीत करने के बाद पकड़ लिया जाय और बात–चीत में ही गोपाल और संगतिया सिंह को इसका आभास हो गया था, जिससे बड़ी चतुराई के साथ गोपाल फिर उनके हाथ से निकल कर अपनी सेना में आ मिला इधर से और सहायता भी प्राप्त हो गई।

16. गोपाल का सुरक्षा पूर्वक पहुंचने का गम हुसैनी से अधिक कृपाल को हुआ (कृपाल और गोपाल की पुरानी दुश्मनी थी) अतः कृपाल और भीम चन्द ने आगे होकर लड़ने का और हुसैनी को उनको आगे कर, लड़ाने की इच्छा पूर्ण हुई।

17. घमंडी, मूर्ख और युवा हुसैनी का साथ देने लगे नगाड़ों और भेरी की गूंज करते हुए रण भूमि में कूद पड़े।

18. दूसरी ओर से भी जयकारों की गूंज और गरजन करते हुए वीर घोड़े नचा–नचा कर और शस्त्र घुमाते हुए युद्ध भूमि में आ गये।

19. ये वीर मगरमच्छों की भाँति लज्जा को त्याग कर कृपाणें हाथ में ले शत्रुओं पर टूट पड़े और उन्हें पृथ्वी की धूल दिखाने के लिए भूमि पर लिटा दिया।

20. तड़ाक–तड़ाक करती बन्दूकें, कड़ाक–कड़ाक करते तीर और सड़ाक–सड़ाक करते हुए शूल और त्रिशूल चलने लगे।

21. वीर गरजन करने लगे, योद्धा ललकारने लगे और शूरवीर युद्ध भूमि में ऐसे निर्भय होकर चौकड़ियां भरने लगे जैसे जंगल में चित्रा।

22. घोड़े हिनहिनाने, ध्वज फहराने और शस्त्र टकराने लगे। ढाल अपने ऊपर वार सहन कर रही थी और तड़ाक–तड़ाक की अवाज पैदा हो रही थी।

23. वीर युद्ध में घायल होकर पृथ्वी पर ऐसे पड़े थे जैसे त्यागी संत बेफ़िक्र होकर लेटा हो। उनके खुले केश किसी ऋषि के आराम करने का दृश्य उत्पन्न कर रहे थे।

24. सजे हुए हाथी चिग्घाड़ रहे थे और उनके हौदों में खान तीर कमान संभाले युद्ध में उतर रहे थे।

25. नोटः– ये पुरातन हिन्दू परम्परा है कि शत्रु पक्ष में भी खड़े योद्धाओं का गुणगान किया जाता है। महाभारत में जहां भीष्म पितामह का सम्मान और गुणगान स्वयं श्री कृष्ण करते हैं वहीं द्रोणाचार्य का आदर शत्रु पक्ष में होने पर भी पांडव सम्मानजनक करते रहे।

दुर्योधन जैसा लोभी भी अपने शत्रुओं के प्रति कहता हैः––

"अत्र शूरः महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च् महारथः" "अतः अपने शत्रुओं का भी गुणगान करता है। ठीक उसी परम्परा के अंतर्गत गुरु जी शत्रु पक्ष के वीरों की वीरता और कृत्यों की श्रेष्ठता को देख कर वाह-वाह कहने में संकोच नहीं करते। ये हमने पहले भी समझ लिया होगा और आगे के श्लोकों में भी यही संकेत मिलेगा।

गुरु जी पच्चीसवें श्लोक में लिखते हैं कि कृपाल चन्द वीर रस, युक्त हो गया और युद्ध सज्जा से सजे घोड़े पर सवार होने से पूर्व अपने आपको अनेक प्रकार के कवचों से ढ्रापतें हुए कई शस्त्रों और ढालों के साथ सशस्त्र कर लिया अपने साथ उन वीरों को लिया, जिनके मुख युद्ध में जाते समय क्रोध से लाल होकर तेजस्वी बन गये थे। उन्होंने भी अपने शरीर को शस्त्रों सुसज्जित कर लिया था। ये सब मारो-मारो कह कर शत्रु पर टूट पड़े जैसे मस्त हाथी क्रोध से शत्रु की ओर भागता है।

26. उस समय ही कांगड़ा नरेश कृपाल चन्द कटोचिये ने भी युद्ध के लिये तैयारी कर ली उसका मुख और नेत्र वीर रस युक्त रक्त वर्ण में रंग गये। उस समय सिवाय युद्ध के उसने सब विचार भुला दिये।

वहीं पठान और खान भी युद्ध में ऐसे विचरण करने लगे जैसे पिल्ले मांस की खोज में निकले हों।

27. रण भेरी भूं-भूं कर बज उठी। तीरों के कड़कने की आवाजें तेज हो गईं। निकटता इतनी थी कि कई स्थानों पर मल्ल युद्ध होने लगा और कहीं कृपाणें आपस में लोहा लेने लगीं कई तरफ तो मस्ती का वातावरण ऐसा था कि युद्ध के गीत तक गाये जा रहे थे। रण भूमि में बिना सिर के धड़ और बिना धड़ के सिर नाचते दिखाई देने लगे।

28. लोहे के टोप पर गदाओं के प्रहार होने लगे। वीर शहीदों के शवों के ढेर लग गये और उनमें ऐसे भी थे जिनके शरीर रण भूमि में आने से पूर्व घाव मुक्त थे परंतु आज उनके शरीर घावों से भर गये। मैदाने जंग में हर तरफ नर मुण्ड दिखाई पड़ने लगे।

29. तीरों की वर्षा दोनों ओर से होने के कारण सह सैनिंकों से कम, आपस में अधिक टकरा कर नष्ट हो रहे थे। कृपाणें भी आपस में टकरा कर भयंकर नाद करने लगी थीं। क्रोध से भरे क्षत्री बाणों को छोड़ने में तेजी करने लगे थे, जिनके बाण या तो बिना वार किये स्वयं खाली चले जाते अथवा योद्धाओं को भेद कर घोड़ों की पीठ खाली अर्थात् योद्धा विहीन कर देते।

30. विरोधी योद्धा आपस में जोरों से जूझ कर गुत्थमगुत्था हो गये जैसे दो विरोधी हाथियों के दांत आपस में लड़ते हुए फंस गये हों अथवा दो बलशाली शारदूल आपस में जूझ पड़े हों ठीक इसी प्रकार कृपाल चन्द और गज सिंह गोपाल गुत्थमगुत्था हो गये थे।

31. हुसैनी के पक्ष का एक योद्धा हरि चन्द तीर की सी तेजी से धावा बोलता हुआ

आया उसका सारा शरीर तीरों से छलनी हो गया था परंतु वह योद्धा वीर गति पाने तक युद्ध करता रहा और अंत में देव लोक सिधार गया।

32. गोपाल की मित्रता को निभाता हिम्मत सिंह कृपाण और गदा से सजकर जलाल खां पर टूट पड़ा दोनों में बड़ी मस्ती पूर्ण वीरता से युद्ध हुआ। एक दूसरे की गदाओं से टकराने पर आग की चिन्गारियां फूट पड़ीं।

33. बडी। वीरता से जस्सीवाल के राजा केसरी चन्द ने हुसैनी को घेरा और उसके चारों ओर घोड़े को नचाने लगा और फिर एक तेज भाले का जोरदार प्रहार हुसैनी पर किया।

34. हुसैनी ने संभलते हुए तीरों की वर्षा प्रारम्भ कर दी। उसके बाण से निकला हर तीर जिसको लगा उसके लिए स्वर्ग का द्वार खुल गया।

35. जैसे-जैसे घाव अधिक लगते तैसे-तैसे युद्ध का वेग बढ़ता गया। एक दूसरे पर तीरों से घाव लगाने लगे।

36. चारों ओर युद्ध की तेजी बढ़ने लगी। हर मुख से मारो-मारो का शब्द गूंजने लगा । निर्भय होकर हर योद्धा जूझ पड़ा क्योंकि दोनों ही पक्ष विजय के प्रति आशायुक्त थे।

37. पठान बच्चे भी अब आगे बढ़े उनके पाँव ऐसे लड़खड़ा रहे थे मानो शराब पी रखी हो उनकी ऐसी दशा देखकर विपक्ष के शूरवीर हर्षित हो उठे।

38. ये कुछ एक महायज्ञ था जिसमें बाणों के प्रहारों की आहुतियाँ दी जा रही थीं। धनुष की टंकार मानो वेद मंत्रों का उच्चारण कर रही थीं। योद्धाओं की ललकार और ऊंचे स्वर की जयकार शांति पाठ के मंत्र का बदल बन गयी थी।

39. बलवान वीरता का प्रदर्शन करता, सभी प्रकार के शस्त्रों का प्रयोग करता हुआ शनैः-शनैः अपनी विजय की ओर सरकते हुए कृपाणों की झंकारें करने लगा।

40. कमान कड़के, कृपाणों से झंकार उठी और अन्य शस्त्र टंकार करने लगे।

41. शूरवीर बिना किसी भय और शंका के शस्त्रों के प्रयोग में लग गये।

42. रणभूमि रक्त से लाल हो गयी। मरने वालों के लिए अपसरायें आकाश में उनके स्वागत की प्रतीक्षा करने लगीं। पठानों के मुंह से मरते हुए निकले दुखित शब्द और चीखें भयंकर वातावरण उत्पन्न करने लगीं।

43. रणभूमि में मृतक हाथियों के शव पहाड़ दिखाई देने लगे तो कहीं बिना सवार के घोड़े हिनहिनाते फिरने लगे। जहाँ-जहाँ जंग चल रही थी वहाँ-वहाँ तीर तलवारों और मरने वालों का शोर संयुक्त हो रहा था।

44. बड़ा भयंकर दृश्य था। कुत्ते और कौये अपना शिकार खेलने में लगे थे। कहीं-कहीं बन्दूक के चलने की आवाजें जब हवा में बिखरतीं तथा शस्त्रों के चलने से जो धुंआ फैलता वह कुत्तों एवं कौओं के लिए बाधक बनता।

45. जब हुसैनी ने अपने साथी पहाड़ियों को अच्छी तरह पिटवा दिया तो स्वयं सेना लेकर उतरा। सभी तुर्कों ने हाथों में तीर और कमान संभाले। खूनी मुगल रणभूमि में पांव जमाने लगे। उनके चेहरे भयाने हो रहे थे।

46. एक बार फिर से वीरों ने ढाल, भाले, तीर और त्रिशूल संभाले। युद्ध पुनः जग उठा।

47. बन्द हो गये ढोल और नगाड़े बजने लगे। भूमि पर घायल नव चेतन होकर शस्त्र उठा पुनः लड़ने लगे और जो न उठ सके वह पैरों तले रुन्ध गये।

48. लोहे के टोप और टूटी ढालें भयंकरता का प्रदर्शन कर रहीं थीं। जो कभी महावीर थे अब भूत हो गये उनके मुरदे विकराल चट्टानों की भाँति हो गये। मानों बैताल, भूत, प्रेत, डांकनी और योगिनी शिव के तांडव के साथ नाचने लगे।

49. युद्ध की सभी यादें ताजी हो गयीं। मानों किन्नर जच्छ और पिशाच जाग उठे हों। योगिनी, अच्छरा और पच्छरा नाच उठीं मरारुद्र होने से प्रलय सी आ गयी ब्रह्मा कहीं और ध्यान मग्न हो गये और सिद्ध पुरुष ध्यान मग्न हो गये।

50. घोर रण पड़ा। जस्सोवाल के बहादुरों ने और संगतिया सिंह के साथ आये सिखों ने हुसैनी की सेना को ऐसे काटा जैसे दर्जी कपड़े काटता है।

51. अब खूनी हुसैनी अपनी फौज के नौजवानों की लाशों में ऐसे खड़ा था जैसे पराजय स्तम्भ गड़ गया हो फिर भी वह हठी इस तेजी से बाण चला रहा था जिसे छूते ही प्राण शरीर को छोड़ते।

52. नोटः– गुरु जी ने फिर एक बार शत्रु को युद्ध में योग्यता और वीरता से लड़ते देख लिखा है कि बाणों से हुसैनी का सारा शरीर घाव युक्त हो गया था चारों ओर से उसे घेर कर मारो–मारो के नारे लग रहे थे फिर भी वह वीरता से अंत तक लड़ता हुआ स्वामी भक्ति का प्रदर्शन करता रहा और अंत में बहिश्त पधार गया।

53. हुसैनी के मरते ही उसके बचे–खुचे साथी मुगलों, पठानों और खान बहादुरों के हौसले टूट गये और वे सिर पर पैर रख कर भागने लगे परंतु कटोचिये को जोश आ गया।

54. कटोचिये एकत्र हो गये और हिम्मत सिंह सहित सब में साहस उत्पन्न हो गया। हरि सिंह ने भी हल्ला बोल दिया और घुड़ सवार शत्रुओं को चुन–चुन कर मारने लगा।

55. और इस तरह कटोचिये ने एक बार फिर रण में अपने पांव जमाने में सफलता प्राप्त कर ली और मारो–मारो करता हुआ सेना में उत्साह भरने लगा।

56. गोपाल के मित्र गाजी चन्द को भी क्रोध आ गया जो भी कटोचिया उसके सामने आया उसने उसी को साफ कर दिया, वही बच पाये जो उसके सामने से भाग गये।

7. संगतिया सिंह ने अपने सातों सवारों सहित कितने ही शत्रुओं का नाश कर गुरु का नाम लेते हुए वीरगति को प्राप्त कर गये।

8. हिम्मत सिंह जो युद्ध में था, कितनों को शहीद करने के बाद घायल हो गया।

9. उसका घोड़ा तो उसी समय मर गया परंतु हिम्मत मूर्छित होकर गिर पड़ा और कृपाल चन्द के मृत शरीर को ढूढ़ने के लिए उसके शूरवीर साथी क्रोध से युद्ध भी करते थे।

0. जो भी उनके सामने आया वो उनके क्रोध से नहीं बचा ये देखकर कृपा राम गाजी ने उनको वो मार मारी कि फिर वे रुके नहीं भागते ही नजर आये।

1. उसने एक बड़ी सेना को हराया था निडर होकर शस्त्रों का प्रयोग करता रहा था इस तरह यश को प्राप्त हुआ।

2. शंख नाद और भेरी आदि की आवाजें होने लगीं। डमरु बजने लगे। हठी अभी भी शस्त्र नहीं छोड़ रहे थे।

3. एक भयानक दुखदायक दृश्य है। वह क्षत्रपति जिनकी मूंछ का बाल टेढ़ा नहीं होता था आज रणभूमि में अंगहीन शव के रुप में पड़े थे।

4. अब थके-थके हाथ शस्त्रों से घोड़ों को भगाने का काम करने लगे हैं।

5. कृपाल चन्द, हुसैनी और दूसरे साथियों को मरवा कर भाग गया। इधर गोपाल गज सिंह की विजय हुई वह प्रसन्न हुआ।

6. खान हुसैनी और हिम्मत को रण में मरते देखकर कृपाल और उसके साथी ऐसे भागे जैसे कोई महंत संसार को त्याग कर भाग जाता है।

7. इस तरह गज सिंह गोपाल ने शत्रुओं का नाश किया अपने घायलों को इलाज के लिए उठा लाया।

वीरगति पाने वाले अपने वीरों का दाह संस्कार किया। तभी उसने अधमरे हिम्मत सिंह को भी मुर्दों में पड़ा देखा। राम सिंह ने गोपाल से कहा।

8. "देखो गोपाल ये वहीं है जिसने अपने निजी स्वार्थवश होकर ईर्ष्या में रत होकर कितना उत्पात मचाया आज सिसक रहा है ऐसा सुनते ही गोपाल ने हिम्मत को सदा के लिए सुला दिया।

9. एक होकर राजा लोग जीते। शांति का वातावरण जगा और इस सुखद समाचार की स्मृति को लेकर अपने-अपने राज्य में वापस चले गये। जगत पिता जगदीश्वर ने हमारी रक्षा की लोहे के पानी की वर्षा आनन्दपुर से दूर ही हुई। हुसैनी आनन्दपुर के निकट न आया दूर ही मर गया।

इति श्री विचित्र नाटक ग्रंथे हुसैनी कृपाल बध कथनं ग्यारहवां धियाय समाप्तमस्तु ।।11।। अफ़ ज़423

श्री विचित्र नाटक

बारहवां अध्याय

।। चौपाई ।।

जुद्ध भयो इह भाँति अपारा।
तुरकन को मार्यो सिरदारा।
रिसतम खान दिलावर तए।
इतै सऊर पठावत भए ।।1।।

उतै पठिअ उन सिंघ जुझारा।
तिह भलान ते खेद निकारा।
इत गजसिंघ पंमा दल जोरा।
धाइ परे तिन ऊपर भोरा ।।2।।

उतै जुझारसिंघ भ्यो आडा।
जिम रन खंभ भूमि रनि गाडा।
गाडा चलै न हाडा चलिहै।
सामुहि सेल समर मो झलिहै ।।3।।

बाट चड़ै दल दोऊ जुझारा।
उत चंदेल इतै जसवारा।
मंडिओ बीर खेत मो जुद्धा।
उपज्यो समर सूर मन क्रुद्धा ।।4।।

कोप भरे दोऊ दिस भट भारे।
इतै चंदेल उतै जसवारे।
ढोल नगारे बजे अपारा।
भीम रुप भैरो भभकारा ।।5।।

।। रसावल छंद ।।

धुणं ढोल बज्जे।
महाँ सूर गज्जे।
करे शस्त्र घावं।
चड़े चित्त चावं ।।6।।

न्रिभै बाज डारै।
परग्घै प्रहारै।
करे तेग घायं।
चड़े चित्त चायं ।।7।।

बकै मार मारं।
न शंका बिचारं।
रुलै तच्छ मुच्छं।
करै सुरग इच्छं ।।8।।

।। दोहरा ।।

नैक न रन ते मुरि चले करै निडर ह्वै घाइ।
गिर गिर परै पवंग ते बरे बरंगन जाइ ।।9।।

।। चौपई ।।

इह बिधि होत भयो संग्रामा।
जूझे चंद नराइन नामा।
तब जुझार एकल ही धयो।
बीरन घेरि दसो दिसि लयो ।।10।।

।।दोहरा।।

धस्यो कटक मै झटक दै कछू न शंक विचार।
गाहत भयो सुभटन बड बाहति भयो हथिआर ।।11।।

।। चौपाई ।।

इह बिधि घने घरन को गारा।
भाँतिळभाँति के करि हथिआरा।
चुनि चुनि बीर पखरिया मारे।
अंति देवपुर आप पधारे ।।12।।

।। इति श्री बचित्र नाठक ग्रंथे जुझारसिंघ जुद्ध बरननं नाम द्वादासमो धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।12।। अफजू ·।।435।।

श्री विचित्र नाटक

बारहवाँ अध्याय

1. इसी प्रकार एक और भारी युद्ध सामने आ खड़ा हुआ जिसमें बहुत से तुर्कऔर उनके सरदार मौत के घाट उतार दिये गये।

   नोटः– इस युद्ध का कारण दिलावर खां की बार–बार हार थी। कारण गुरु गोविन्द सिंह द्वारा, जन साधारण और पहाड़ी राजाओं के अन्दर उस गौरव की भावना को, जो मर चुकी थी, पुनः प्रज्ज्वलित कर देना था और अब मुगल सरकार उनके लिये मात्र एक विदेशी सत्ता थी, जिसे समाप्त किया जा सकता है। दिलावर खां पिछली पराजय से तिलमिला उठा था अतः उसने बदला लेने हेतु एक भारी मुसलिम दल भेजा जिसका सेनापित पुनः रुस्तम खां बनाया गया तथा इस सेना ने भलान गांव में आ मुकाम किया।

2. वहाँ से उसने जुझार सिंह को भेजा। इधर गज सिंह पम्मा तथा परमानन्द को भीम चन्द ने भेजा जिन्होंने प्रातः ही उन पर (जुझार सिंह पर) हल्ला बोल दिया और भिलान से रुस्तम को भी खदेड़ दिया।

3. इधर जुझार सिंह रणभूमि में ऐसा अड़ा मानों भूमि में स्तम्भ खड़ा हो। एक बार जोर लगाने पर खम्भा तो हिल भी सकता है मगर यह हाड़ा जाति का राजपूत जुझार सिंह तो कभी हिल नहीं सकता था। युद्ध में सामने खड़े रहकर हर वार को छाती पर सहन कर रहा है।

4. दोनों ओर से योद्धाओं के दल चढ़े। उधर से चन्देले और इधर से जस्सोवालिये वीर रस से प्रेरित होकर योद्धा अपना सब कुछ दाँव पर लगा कर जूझ पड़े।

5. जसवारे और चन्देले योद्धा क्रोध से भरे अपार ढोल नगाड़े बजाते आपस में ऐसे जुझे मानों भैरों ने भीषण रुप ले लिया हो।

6. युद्ध के नगाड़े आज योद्धागणों का संगीत बन गये हैं। इससे शौर्य प्रबल होने लगा है। शस्त्रों को चाल में घाव करने की अधिक क्षमता आ गई है और शूरवीरो के चित हर्षित हो उठे हैं।

7. मन में एक चाव है जिसमें भर कर वह घोड़ों को भगाते तलवारों और फरसों से प्रहार कर रहे हैं।

8. चिल्ला–चिल्ला कर वह मारो–मारो का घोष करते हैं शहीद होकर स्वर्ग गामी होने की इच्छा ने उनके घायल होने तथा मृत्यु के भय को नाश कर दिया है।

9. कोई भी वीर पीठ दिखाने को तैयार नहीं सभी योद्धा जैसे दीपक पर पतंगा गिरता है वैसे ही रण चण्डी में शहीद होकर मृत्यु का वरण कर रहे हैं।

10. इस प्रकार यह संग्राम होने लगा तो चन्दन राय नाम का राजा पहले वीरगति को प्राप्त हुआ। जुझार सिंह अब अकेला ही ज़ूझने लगा मगर सब दिशाओं से घिर गया।

11. जुझार सिंह ने अब जीवन की चाह तथा राह त्याग दी और शत्रु दल को काटता मारता दीवाना बन जूझ पड़ा।

12. इस प्रकार उसने कितने ही बलवानों को मौत की नींद सुला कर तथा अनेक प्रकार के शस्त्र चलाने का प्रदर्शन करते हुए वीरता से शहीदी प्राप्त कर ली। शाही फौज में बीमारी फैल गई थी अतः वह विफल हो वापस लाहौर चले गये।

।। इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे जुझारसिंघ जुद्ध बरननं नाम द्वादसमो धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।12।। अफजू ।।435।।

श्री विचित्र नाटक

तेरहवाँ अध्याय

शहज़ादे को आगमन मद्र देस।

।। चौपई ।।

इह बिधि सो बध भयो जुझारा।
आन बसे तब धाम लुझारा।
तब अउरंग मन माहि रिसावा।
मद्र देस को पूत पठावा ।।1।।

तिह आवत सभ लोक डराने।
बडे बडे गिर हेर लुकाने।
हमहूं लोगन अधिक डरायो।
काल करम को मरम न पायो ।।2।।

किंतक लोक तजि संगि सिधारे।
जाइ बसे गिरबर जह भारे।
चित मूज़ीयन अधिक डराना।
तिनै उबारन अपना जाना ।।3।।

तब अउरंग जिय माँझ रिसाए।
एक अहदोआ इहाँ पठाए।
हम ते भाजि बिमुख ते गए।
तिन के धाम गिरावत भए ।।4।।

जे अपने गुर ते मुख फिरहै।
इहाँ उहाँ तिसके ग्रिह गिरहै।
इहाँ उपहास न सुरपुर बासा।
सभ बातन ते रहै निराशा ।।5।।

दूख भूख तिनको रहै लागी।
संत सेव ते जो है त्यागी।
जगत बिखै कोई काम न सरही।
अंतहि कुंड नरक को परही ।।6।।

तिन को सदा जगत उपहासा।
अंतहि कुंड नरक की बासा।
गुर पग ते जे बिमुख सिधारे।
इहाँ उहाँ तिन के मुख कारे ।।7।।

पुत्र पउत्र तिन के नहीं फरैं।
दुख दै मात पिता कौ मरै।
गुर दोखी सग की म्रित पावैं।
नरक कुंड डारे पछुतावैं ।।8।।

बाबे के बाबर के दोऊ।
आप करे परमेशर सोऊ।
दीन शाह इनको पहिचानो।
दुनी पती उन कौ अनुमानो ।।9।।

जो बाबे के दाम न दैहै।
तिन ते गहि बाबर के लैहै।
दै दै तिन को बडी सजाइ।
पुनि लैहै ग्रिह लूटि बनाई ।।10।।

जब ह्वैहैं बेमुखी बिना धन।
तब चड़िहैं सिक्खन कह माँगन।
जे जे सिक्ख तिनै धन दैहैं।
लूटि मलेछ तिनू कौ लैहैं ।।11।।

जब हुइहै तिर दरब बिनासा।
तब धरिहै निज गुर को आसा।
तब ते गुर दरशन को ऐहैं।
तब तिन को गुर मुख न लगैहैं ।।12।।

बिदा बिना जैहैं तब धामं।
सरिहै कोई न तिन को कामं।
गुर दर खोइ न प्रभ पुर वासा।
दुहूं ठउर ते रहे निरासा ।।13।।

जे जे गुर चरनन रत ह्वैहै।
तिन को कशटि न देखन पैहैं।
रिद्ध सिद्ध तिन के ग्रिह माहीं।
पाप ताप छ्वै सकै न छाहीं ।।14।।

तिह मलेछ छ्वैहै नही छाहाँ।
अष्ट सिद्ध ह्वैहै घरि माहाँ।
हास करत जो उदम उठैहै।
नवो निद्धि तिन के घरि ऐहै ।।15।।

मिरज़ाबेग हुतो तिह नामं।
जिन ढाहे बिमुखन के धामं।
सभ सनमुख गुर आप बचाए।
तिन के बार न बॉकन पाए ।।16।।

उत अउरंग जिय अधिक रिसायो।
चार अहदीयन अउर पठायो।
जे बेमुख तॉ ते बचि आए।
तिनके ग्रिह पुनि इनै गिराए ।।17।।

जे तजि भजे हुते गुर आना।
तिन पुनि गुरु अहदोअहि जाना।
मत्र डार तिन सोस मुडाए।
पीहुरि जानि ग्रिहहिं लै आए ।।18।।

जे जे भात हुते बिनु आइसु।
कहो अहदीअहि किनै बिताइसु।
मूंडि मूंडि करि शहरि फिराए।
कार भेट जनु लैन सिधाए ।।19।।

पाछै लागि लरिकवा चले।
जानुक सिक्ख खा हैं भले।
छिके तोबरा बदन चड़ाए।
जनु ग्रिह खान मली।दा आए ।।20।।

मसतक सुभ पनहीयन धाइ।
जनु करि टीका दए बनाइ।
सीस ईंट के घाइ करेही।
जनु तिनु भेट पुरातन देही। ।21।।

।। दोहरा ।।

कबहूं रण जूझ्यो नही कछु दै जसु नहि लीन।
गॉव बसति जान्यो नही जस सो किन कहि दीन ।।22।।

।।चौपाई।।

इस बिध तिनो भयो उपहासा।
सभ संतन मिलि लख्यो तमासा।
संतन कष्ट न देखन पायो।
आप हाथ दै नाथ बचायो ।।23।।

।। चारनी ।। ।।दोहिरा।।

जिसनो साजन राखसी दुशमन कवन बिचार।
छ्वै न सकै तिह छाहि कौ निहफल जाइ गवार ।।24।।
जे साधू शरणी परे तिन के कवण बिचार।
दंत जीभ जिम राखिहै दुशट अरिष्ट सँघार ।।25।। ।मू.ग्रं.-72।

।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे शाहजादे व अहदीआ गमन *बरननं नाम तरौदसमों धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।13।।*
अफजू ।।460।।

श्री विचित्र नाटक

तेहरवाँ अध्याय

नोटः– *दिलावर खां की फौज, जो कई बार पराजय का मुंह देख चुकी थी, अब इस स्थिति में नहीं थी कि इस क्षेत्र में फैली हुई किसी समस्या की मुगल सरकार के पक्ष में सुलझा सकी।*

1. जुझार सिंह की इस तरह (पूर्व अध्याय अनुसार) मृत्यु हो गयी और सेनायें जुझार सिंह को मृत्यु का शोक मनाती हुई जहाँ से आई थीं, अपना सा मुंह लेकर लौट गईं। औरंगजेब को इन सब घटनाओं से बड़ा कष्ट था खोज कर उसने अपने पुत्र मौअज़्ज़म (जो बाद में बहादुर शाह के नाम से बादशाह बना) को पंजाब में मुगल सरकार विरोधी तत्वों को दमन करने हेतु भेजा।

2– मौअज़्ज़म के आने की सूचना मात्र ने ही बहुत से पहाड़ी राजाओं में कंपन उत्पन्न कर दिया और वे घरों को छोड़कर पहाड़ों में सुरक्षित स्थानों पर चले गये। मुझे भी डराने के लिये कि मैं भी चार दिन के लिए इधर–उधर हो जाऊं लोग आये। वे बेचारे भगवान के कृत्यों को अथवा काल–करम को समझ न पाये थे।

3– मेरे पास रहने वाले कई सिख भी ऐसी स्थिति को देख कर डर के मारे भाग गये, वह भी दूर पर्वतों में जा छिपे। ये सिख भूल गये कि अगर वे मेरे भरोसे रहते तो मैं उनकी रक्षा करता ही। परन्तु वे मनमुख हो गए।

4– औरंगजेब तो दुखी बैठा ही था-उसने एक अन्य सेना के साथ मिर्जा ब्रेग को सेनापति बनाकर भेजा, जिसने यह निश्चय और प्रण (अहद) किया कि वह तब तक वापस नहीं आयेगा जब तक विजय प्राप्त नहीं कर लेगा। (गुरु गोविन्द सिंह को बन्दी बनाने का अहद करके ये अहदिया आया था) आते ही उसने आनन्दपुर में पड़े खाली घरों को (जिनमें से डरपोक लोग भाग गये थे) जलाना और नींव से ही उखाड़ना प्रारम्भ किया। गुरु से विमुख हुए सिखों के घर धूं–धूं कर जल उठे।

5– वो सिख जो गुरु पर विश्वास न कर भागे फिरते हैं उन्हें कहीं सुख नहीं मिलता। लोग उन्हें डरपोक कह कर उनका उपहास करते हैं। उनके घर यहाँ तो नष्ट हो ही गये परलोक में भी दुखी होंगे। अतः वे अशांत रहते हुए नर्कगामी होंगे।

6– ऐसे दुर्बुद्धि लोग जीवन भर दुखी और असहाय ही बने रहते हैं। उनके सिर पर संतों का संरक्षण रहता नहीं। सदा अपने सामने मृत्यु को नाचता देखकर पागलों जैसी हरकतें करते हैं वे जन–जीवन में कभी सफलता प्राप्त नहीं करते। अन्ततोगत्वा वे नर्ककी आग में ही जलते हैं।

7– उनके मुख गुरु से विमुख होने के कारण मलीन होते हैं। लोग उनपर उंगली उठाते और अट्टहास करते हैं। प्रभु पर भरोसा न करने के कारण सदा के लिए नर्कजैसा जीवन भोगते हैं।

8– गुरु के बचनों पर ।जहाँ–जहाँ खालसा जी साहब तहा–।।८।। रक्षा रहती। पर विश्वास न करने वाले कुत्ते की मौत मरते हैं और ये सड़न नर्क में भी उनका पीछा करती है। उनके पुत्र और पौत्र भी उन पर धिक्कार भेजते हैं। और ऐसे मनमुख लोगों की संतान भी प्रफुल्लित नहीं होती।

9– ईश्वर ने बाबा नानक का धाम धर्म हेतु बनाया और बाबर को अधर्म के लिये दुनिया का राज दिया। इधर दुनिया को धर्म का मार्ग दिखाने वाले शाह बनाये तो शासन करने हेतु लुटेरे भू–पति बनाये।

10– जिस–जिस ने अपनी शुद्ध कमाई को बाबा के धर्मार्थ कार्य में नहीं लगाया अर्थात् देश और धर्म की रक्षा के लिए धन का उपयोग नहीं किया उनका धन बाबर ने लूट लिया उनको बड़े दुख और कष्ट मिले उनके घर–बार जलाये गये, लूटे गये।

11– ऐसे विमुख सुरक्षा और भिक्षा के लिए गुरु सिखों की शरण में भागे मगर उनको किसी ने आश्रय नहीं दिया। गुरु से विमुख होने वाले को आसरा देने वाला भी उसी तारणा का अधिकारी बना।

12– दुखी होकर वे अपने किये पर पछतायेंगे। गुरु के पास दौड़ेंगे परन्तु गुरु भी मुंह नहीं लगायेगा।

13– ऐसे मृत्यु के भय से डर कर भागे जब रो–धो कर लौटेंगे तो उनके घर जल चुके होंगे। उन मनमुख लोगों ।पर। का कोई भरोसा नहीं करेगा। गुरु से विमुख को तो ईश्वर भी शरण नहीं देता। अतः वे इस लोक और परलोक में दुखी होंगे।

14– जो गुरु की आशा का पालन करेंगे उनके शब्दों पर निष्ठा रखेंगे उनको कभी भी किसी बात का कष्ट अनुभव नहीं होगा। न ही वे दुख में दुख को मानेंगे। (ऐसा लोग दुख को भी उसी प्रकार प्रभू का प्रसाद समझकर स्वीकार करेंगे जैसे सुख को करते रहे हैं) उनके पास सदा रिद्धि और सिद्धी रहेगी उनको पाप और ताप कभी नहीं सतायेंगे।

15– जो अपने गुरु के बन कर रहेंगे उनको बाबर की मलेच्छ सेना छू भी नहीं सकेगी। उनके घर में आठों सिद्धियां और नौ निधियां बनी रहेंगी। वह अनजाने में भी यदि कोई इच्छा प्रकट करेंगे तो वह भी पूर्ण होगी।

16– मैंने विमुख सिखों के घर जलाने वाले मिर्जा बेग का स्वयं सामना किया। और अपने आश्रितों को बचाया (मिर्जा बेग अहदिया गुरु को प्रणाम कर वापस चला गया)।

17– उधर जब औरंगजेब को यह सूचना प्राप्त हुई तो मानों उसे आग लग गई। अब के उसने चार अहदिये भेजे, जिन्होंने आते ही गुरु से विमुख उन राजाओं और सिखों के घर, खेत आदि जो मिर्जा बेग की मार से बच गये थे अथवा जो वेमुख उसके जाने के बाद फिर आ गये थे, जला दिये।

18- ऐसे कायर जो भय से काँप कर जीवन बचाने के लिये नानक के पथ को त्याग गये थे तथा उन औरंगजेब के मलेच्छों की शरण में गये मानों उनको ही अपना गुरु बना लिया। कि वो उनकी जान-माल की रक्षा करेंगे। परन्तु उनको नानक के घर जैसा अमृत नहीं मिला बल्कि अहदियों ने इतना अपमान किया कि उनके सिर पर अपना मूत्र डालकर मुंडवाया।

19- उन भगोड़ों से पूछ-पूछ कर कि कौन-कौन से गुरु के सिख भागे हैं और कहाँ-कहाँ हैं जब मलेच्छ सेना ने उन्हें पकड़ा तो उनके सिर मूंडा कर मुंह काला किया और गुलाम बनाकर बेगारी कराने लगे।

20- इन विमुखों की हालत पागलों जैसी हो गई। लड़के इनके पीछे आवाजें करते हुए चलते और पत्थर मारते और वे भ्रमित होकर ये समझते कि हम गुरु हैं और ये हमारे शिष्य हमारे पीछे आ रहे हैं। उनके मुंह पर तोबरे भरे जाल बांध दिये गये मानों नवाबों ने उनके लिए मिष्ठान भेजे हों।

21- पत्थर लगने से उनके माथे मसीक्ष लहू-लुहान हो रहे थे जैसे नर्क की बादशाहत का टीका कर दिया हो। उनके पुरातन कर्मों का उन्हें फल मिल रहा था।

22- ऐसे कायर लोग न तो कभी युद्ध में शत्रु से जूझ सकते हैं न जीवन में कहीं दान देकर यश प्राप्त करने योग्य ही होते हैं। एक दूसरे को सहायता देकर अपने गाँव में भी प्रेम से रहा जा सकता है इसका इन्हें दूर का भी वास्ता नहीं। अचम्भा है कि ऐसे गुमनाम लोगों को यमदूत भी कैसे खोज लेते हैं।

23- भगवान की माया ऐसी हुई कि अहदियों का जालिम हाथ संत जनों को छू भी न सका। हां ये संत जन भ्रष्टों का तमाशा अवश्य देखते रहे।

24- जिसको मेरा प्यारा साजन प्रभू अपने संरक्षण में ले ले उसको शत्रु से कैसा भय उसकी छाया तक को भी शस्त्र छू नहीं सकता। अहंकारी, मूर्ख अपनी ही चतुराई पर पछाड़ खाता है।

25- जो संतों की संगत में रहता है उसको ईश्वर ऐसे सुरक्षित रखता है जैसे 32 दांतों के बीच जिव्हा। भक्तों की रक्षा सदा प्रभू करता है। यहां भी यही हुआ शाहजादा मौजम ने उन चारों अहदियों को भगवत प्रेरणा से वापस बुला लिया और साधु जन सुरक्षित रहे।

।।इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे शाहजादे व अहदीआ गमन बसननं नाम तरौदसमो धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।13।। अफजू ।।460।।

श्री विचित्र नाटक

चौदहवाँ अध्याय

।। चौपाई।।

सरबकाल सभ साध उबारे।
दुखु दै कै दीखौ सभ मारे।
अद्भुति गति भगतन दिखराई।
सभ संकट ते लए बचाई ।।1।।

सभ संकट ते संत बचाए।
सभ कंटक कंटक जिम घाए।
दास जान मुरि करी सहाई।
आप हाथु दै लयो बचाई ।।2।।

अब जो जो मैं लखे तमासा।
सो सो करो तुमै अरदासा।
जो प्रभु क्रिपाकटाछ दिखैहै।
सो तब दास उचारत जैहै ।।3।।

जिह जिह बिधि मै लखे तमासा।
चाहत तिन को कियो प्रकासा।
जो जो जनम पूरबले हेरे।
कहिहो सु प्रभु प्राक्रम तेरे ।।4।।

सरबकाल है पिता अपारा।
देबि कालका मात हमारा।
मनुआ गुर मुरि मनसा माई।
जनि मो को सुभ क्रिआ पड़ाई। ।5।।

जब मनसा मन मया बिचारी।
गुर मनुआ कह कह्यो सुधारी।
जे जे चरित पुरातन लहे।
ते ते अब चहिअत हैं कहे ।।6।।

सरबकाल करुणा तब भरे।
सेवक जानि दया रस ढरे।
जो जो जन्मु पूरबलो भयो।
सो सो सभ समरण कर दयो ।।7।।

मो को इतो हुतो कह सुद्धं।
जस प्रभ दई क्रिपा करि बुद्धं।
सरबकाल तब भए दयाला।
लोक रच्छ हमको सभ काला ।।8।।
सरबकाल रच्छा सभ काला।
लोह रच्छ सरबदा बिसाला।
ढीठ भयो सब क्रिपा लखाई।
ऐंडो फिरो सभन भयो राई ।।9।।
जिह जिह बिध जनमन सुधि आई।
तिम तिम कहे गरंथ बनाई।
प्रथमे सतिजुग जिह बिधि लहा।
प्रथमे देबि चरित को कहा ।।10।।
पहिले चंडी चरित बनायो।
नख सिख ते क्रम भाख सुनायो।
छोर कथा तब प्रथम सुनाई।
अब चाहत फिर करौ बडाई ।।11।।
।मू.ग्रं. 73।

इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे सरबकाल की बेनती बरननं नामु चौदसमो धिआइ समापतम सतु सुभम सतु ।।14।। अफजू ।।471।।

श्री विचित्र नाटक
(चौदहवाँअध्याय)

प्राया सभही इस गीता के श्लोक को अच्छी तरह जानते हैं कि जब जब भी धर्म की गलानि हुई, अधर्म बढ़ा तो धर्म की रक्षा के लिए भगवान का अवतरण हुआ। गुरु जी ने आत्म कथा के अंत में इन्हीं श्लोकों का संदर्भ दिया है। गुरु जी लिखते हैं कि :--

1- हर युग में सभी साधुओं की भगवान तुमने रक्षा की है। दुख देने वाले कितने ही दुष्टों का संहार किया है अपने भक्त जनों को जिस अचम्भक ढंग से बचाया है उसका गुणगान नहीं किया जा सकता।

2- अनेक प्रकार के अनेक संकटों से प्रभू तुमने अपने संतजनों की रक्षा की है। मुझ पर भी तुम अपना दास समझ कर ऐसी ही सुरक्षा प्रदान करना। मेरे सारे संकटों को कंटकों की भाँति नाश तुमने किया है आपके कम कमल सदा मुझे सुरक्षा प्रदान करते रहे हैं।

3- भगवन अपने आपको समर्पित करते हुए बखान करता हूं कि आपका यह दास प्रार्थना करता है कि आप मुझे ऐसी सद्‌बुद्धि दें जो मैं आपके उत्तम कार्यो का वर्णन कर सकूं।

4- जिस प्रकार के रहस्यमय नाटक आपने मुझे दिखाने की कृपा की है मेरी कामना है कि उनके भेदों का वर्णन मैं जगत में करु। उन सब पूर्व जन्म की कथाओं का मुझे स्मरण है तथा उस पराकर्म का जो मेरे सूर्यवंशी पूर्वजों ने किये। मैं तेरी कृपा से ही उनका वर्णन करना चाहता हूं।

5- मेरा पिता अमर, अजर,अविनाशी अचुत तू ही है। देवी कालिका (आदि शक्ति का स्रोत माँ काली-भगवती) मेरी माँ है मेरी देख-रेख करने वाले आप द्वारा प्रदान की गयी सद्‌बुद्धि रुपी माई है। मेरा गुरु है जिसने मेरा मार्गदर्शन किया।

6- भगवन कृपा से जब मेरी सद्‌बुद्धि का प्रभाव मेरे ऊपर प्रभावी होगा और मैंने स्वयंभू का साक्षात्कार कर लिया तो गुरु कृपा से सनातन काल में जो कौतुक हुए उनका राज प्रकट करने की इच्छा जगी है।

7- मेरे में ऐसी इच्छा के जगने पर अकाल पुरुष ने करुणा में भर कर मेरे पिछले जन्म में और इस काल में प्रभू कार्य हेतु अपना सेवक जानकर मेरे सब पूर्वजन्मों की स्मृति और उस काल में हुए कृत्यों का स्मरण तुमने मुझे करवाया है।

8- अन्यथा मेरे जैसे तुच्छ कोट में इतनी बुद्धि कहाँ थी जो इतनी बड़ी महान शक्तियों का वर्णन कर सकता। ये तो प्रभू की इच्छा तथा कृपा का फल है कि मैं तेरे द्वारा अर्थात् भगवान द्वारा आदि से हुई पूर्व लीलाओं का वर्णन करने योग्य हुआ हूं। तुझी से मेरी प्रार्थना है कि तू मेरे पर ऐसी ही कृपा बनाये रखना।

9- हे अदवय, अमिट आश्चर्यवत् गुरु ।वाहे गुरु। आप मुझ पर हर प्रकार हर समय करुणामय रहे हो। मुझे पूर्ण निष्ठा है तेरी इस अमिट विशाल करुणामय और कृपा का जो आपके द्वारा मुझे प्राप्त हुई है। उसी प्रेरणा से तो मुझे निमित्त मात्र में स्पष्टवादी और भय रहित होने की क्षमता आ गई है। इसी कारण मैं अपने को अपने बराबर वालों में अग्रसर पाता हूं।

10- जिस प्रकार से वाहे गुरु आपने मेरे आत्मिक ज्ञान में वृद्धि की और अपने कृत्यों का मुझ पर स्पष्टीकरण किया वैसे ही मैंने इस ग्रंथ की रचना की जिसमें सतयुग में जिस-जिस विधि से माँ देवी के रुप में लीलायें कीं उनका वर्णन मैं प्रारम्भ करता हूं।

11- मैंने सर्वप्रथम चण्डी चरित्र ही लिखा, अब एत् एक बार फिर रचना पूर्व में भी हुई थी इस चण्डी चरित्र को मैंने क्रमशः नख-शिख से कही है अब एक बार फिर मेरे मन में उसे ही लिखने की उमंग जगी है।

।। इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे सरबकाल की बेनती बरननं मानु चौदसमो धिआइ समापतम सतु सुभो सतु ।।अफजू।। ।।47।।

महाराज- गुरु गोविन्द सिंह जी ने यह नाटक 14 आसाढ़ बदी 1 संवत् 1755 तदनुसार 16 जून 1698 को समाप्त कर दी।
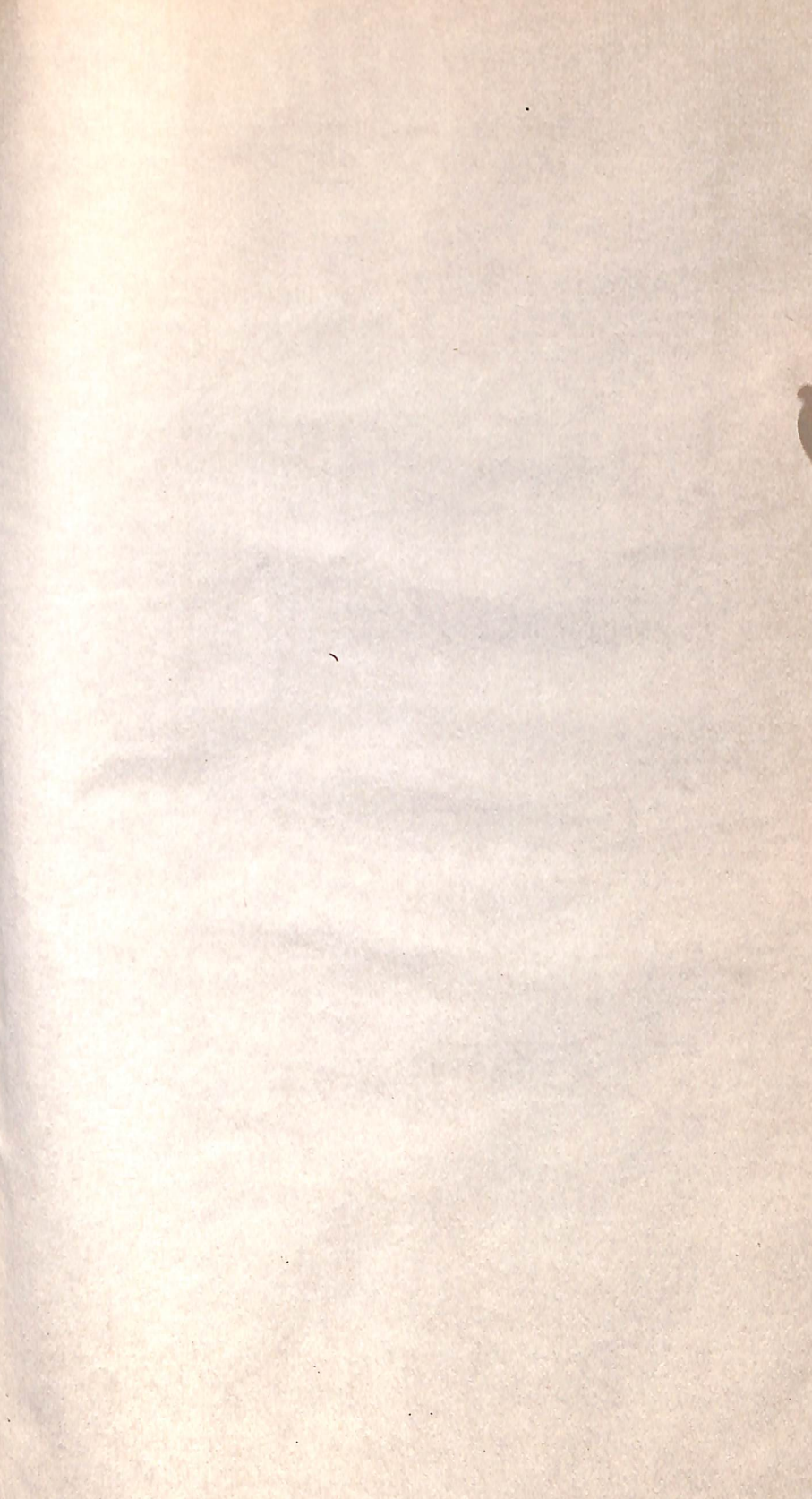
भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

गुरुगोविन्द सिंह जी महाराज
के साहित्य का हिन्दी में
अनुवाद कर प्रकाशन एवं
प्रसारण ।

संस्थापक

(स्व०) सरदार शमशेर सिंह

अध्यक्ष

डॉ० के० पी० अग्रवाल

महासचिव

कमलजीत सिंह

गुरुगोविन्द सिंह साहित्य प्रकाशन प्रसारण समिति